देशबन्धु चित्तरंजन दास

(सी. आर. दास)

* बन्दे मातरम् *

देशबन्धु चित्तरंजनदास

का

जीवन चरित्र

लेखक—

देवनारायण द्विवेदी

प्रकाशक—

पं० रामचन्द्र शुक्ल वैद्य

आदर्श हिन्दी पुस्तकालय

प्रयाग

प्रथम बार] सं० १९७८ वि० [मूल्य ।≠) आना

प्रकाशक—
पं० रामचन्द्र शुक्ल वैद्य
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
प्रयाग
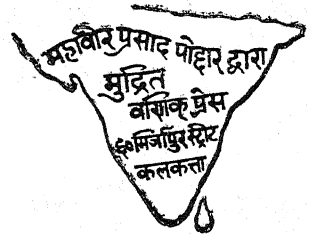
भूमिका।

किसी महान पुरुषके जीवनकी समस्त घटनाओंको पढ़कर मनुष्य अपना जीवन उसके अनुकूल बना सकता है। जीवनियोंके लिखनेका यही एक मात्र उद्देश्य भी है। आज हम जिस महाप्राण, परमदेश भक्त, सर्वस्वत्यागी महनुभावका जीवन वृत्तान्त पाठकोंके सन्मुख उपस्थित कर रहे हैं उससे हमारा हिन्दी संसार भलीभांति परिचित नहीं है। हमारे चरित नायक देशबन्धु चित्तरंजनदास बंगालके प्रधान नेता हैं उनकी प्रतिभा और अलौकिक शक्तिको देखकर जनताने आगामी दिसम्बरमें होनेवाली "आल इंडिया नेशनल कांग्रेस" का सभापति चुन लिया है, ऐसे अवसरपर पाठकोंसे उनका परिचय करा देना हमने परम आवश्यक समझा। महाशय देशबन्धु चित्तरंजनदासका जीवन स्वार्थत्यागसे भरा है उनके जीवनकी समस्त घटनायें अनुकरणीय हैं उन्होंने अपने जीवनमें कैसे कैसे अद्भुत कार्य और देशकी सेवा की है, पाठक महाशय इस छोटी सी जीवनीको पढ़कर उनके सम्बन्धकी सारी बातें जान लें। इस पुस्तकके प्रकाशित करनेका हमारा यही उद्देश्य है।

बंगलामें देशबन्धु चित्तरंजनदासकी जीवनी पढ़कर हमें इस बातकी अत्यन्त आवश्यकता प्रतीत हुई कि हिन्दीमें भी इसका

अनुवाद हो जाय जिससे कि हिन्दी प्रेमी भी लाभ उठासकें किन्तु मुझे हिन्दी भाषा लिखनेका पूर्ण अभ्यास न होनेके कारण इस कार्यमें कठिनाई पड़ी, सौभाग्य वश हमारे परम मित्र पं० देवनारायण द्विवेदीजीने जो समय २ पर हमारी इस प्रकारकी अनेक कठिनाइयोंको हल करते रहे हैं इसके लिखनेका भार अपने उपर ले लिया और देशबन्धु चित्तरंजनदासके सम्बन्धमें लिखो गई बंगलाकी अनेक पुस्तकोंकी छान बीनकर संक्षेपमें उनके जीवनकी समस्त घटनाओं तथा स्वतन्त्र विचारोंको इस छोटी सी पुस्तकमें लाकर अपनी योग्यता और परिश्रमका परिचय दिया है। हम उनके इस निस्वार्थ भावसे किये गये कार्यके लिये चिर कृतज्ञ हैं। आशा है कि हिन्दी प्रेमी इस पुस्तकको आदरकी दृष्टिसे देखेंगे और अपनी उदारताका परिचय देकर हमारे उत्साहको बढ़ावेंगे। छपाईमें अत्यन्त शीघ्रताके कारण पुस्तकके सोलहवें पेजकी सातवीं लाइनमें "बांधव" के स्थानमें "बाधक" तथा उसी पेजकी आठवीं लाइनमें "कोप" के स्थानमें 'कोरा' छप गया है पाठक महाशय उसे सुधारकर पढ़लें। शीघ्रताके कारण ही व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियां भी जहां तहां रह गयी हैं जिसका हमें दुःख है। आशा है विज्ञ पाठक क्षमा करेंगे।

कलकत्ता
२५-११-२१

विनीत—
गिरिधर शुक्ल।

देशबन्धु चित्तरंजनदास

(जीवन-चरित)

प्रथम अध्याय

वंश परिचय, बाल्यकाल और शिक्षावस्था।

आज हम जिन महाप्राण, सर्वस्वत्यागी देशबन्धु चित्तरंजन दासका जीवन वृतान्त लिख रहे हैं उन्हें ऐसा कौन अभागा भारतवासी होगा जो न जानता हो अथवा न जाननेकी इच्छा रखता हो ?

देशबन्धु चित्तरंजनदासका लोक-प्रख्यात नाम श्रीयुक्त दास तथा सी. आर. दास (C. R. Dass) है। आपके पूर्वजोंका निवासस्थान विक्रमपुरान्तर्गत तेलीबाग नामक ग्राम था। उनकी जाति वैद्य थी। यह वैद्य वंश तेलीबागमें एक सम्पत्तिशाली और प्रतिष्ठित घराना समझा जाता था। आपके पितामह जगत बन्धु-दासकी दानशीलता और अतिथि परायणता लोकमें सराहनीय थी। जगतबन्धु महाशय मुख्तारगीरी करके अपने कुटुम्बका जीवन निर्वाह करते थे। आपके पैदा किये हुए धनका अधिक भाग निर्धन और असहाय मनुष्योंके भरण पोषण तथा अपने

गांवकी अतिथिशालामें ही खर्च होता था। दान किया हुआ धन अतिथि सेवामें उचित रीतिसे खर्च किया जाता है अथवा नहीं, इसका आप सदा ध्यान रखते थे और उसकी देख रेख भी आप स्वयं ही करते थे। एकबार आधीरातके समय जगतबन्धु महाशय अतिथिशालाकी परीक्षा करनेके लिए नौकरका वेष धारणकर गांवके घाटपर आये और एक आदमीद्वारा अतिथिशालामें सन्देश भेज दिया कि एक भूखा अतिथि भोजनकी लालसासे आया है। वहांके कर्मचारियोंने कहा कि आधीरातके समय हमलोग अतिथि सत्कार नहीं कर सकते। अस्तु। जगतबन्धु महाशय यह उत्तर सुनते ही लाल हो उठे और फिर घर लौटकर कर्मचारियोंको बुला बहुत धिक्कारा और भविष्यके लिए उन्हें सावधान कर दिया।

महाशय जगतबन्धु बड़े ही करुण-हृदयी थे। एकबार जब कि आपकी युवावस्था थी, पालकीपर बैठे कहीं जा रहे थे, मार्गमें आपने देखा कि एक बूढ़ा ब्राह्मण अत्यन्त दुखी अवस्थामें पालकीका सामना बड़ी ही उद्विग्नतासे छोड़ रहा है। बस फिर क्या था आपमें करुणाका संचार हुआ और उसी समय आपने उस ब्राह्मणको अपने पास बुलाया और कहा "महाराज आप इस पालकीपर बैठकर जहां जाना हो चले जाइये।" यह कहकर आपने उसी समय ब्राह्मणको पालकीमें बैठाकर अपने नौकरोंको ले जानेकी आज्ञा दी और आप कुछ दूरीपर खड़े होकर संसारका अनुभव करने लगे। आप बड़े विद्योत्साही और सुकवि थे।

बंगालमें अबतक आपके लिखित काव्य-ग्रन्थ नारायण सेवा आदि आदरकी दृष्टिसे देखे जाते हैं।

चित्तरंजनदासके पिता श्रीयुक्त भुवनमोहनदास महाशय जगतबंधुदासके इकलौते बेटे थे। भुवनमोहनदास कलकत्ता हाईकोर्टके प्रसिद्ध एटर्नी थे। लेखन कलामें आप बहुत ही निपुण थे। आपने बहुत दिनोंतक "ब्राह्म पबलिक ओपीनियन" नामक पत्रका सम्पादन भी किया था। उसके बाद "बंगाल पबलिक ओपीनियन" नामक पाक्षिक संबाद पत्रके सम्पादन कार्यपर नियुक्त हुए। सम्पादकके पदपर अधिक दिनोंतक रहनेके कारण उन्होंने इस कार्यमें पूर्ण सफलता प्राप्त की। पत्र सम्पादन आप बड़ी निर्भीकतासे करते थे। एक बार आपने "बंगाल पबलिक ओपीनियन" में कलकत्ता हाईकोर्टके न्यायाधीश (जज) के विचारके त्रुटिकी तीव्र आलोचना की। जज लोग उनके इस कार्यपर बहुत असन्तुष्ट हुए। भुवनमोहन जिस मामलेकी पैरवी करते उसे वे लोग जान बूझकर इसलिए हरा देते कि जिससे उनका पेशा बन्द हो जाय। किन्तु भुवनमोहन ऐसे कर्तव्य परायण थे कि उन्होंने इस बातकी तनिक भी चिन्ता न की और आजन्म अपने कर्त्तव्यपर दृढ़ता पूर्वक डटे रहे। एकबार भुवन-मोहनदासने हाईकोर्टमें किसी फाँसी पाये हुए अपराधीकी ओरसे पैरवीके लिए खड़े हुए। इस अपराधीको किसी निम्न श्रेणीकी अदालतमें फाँसीकी आज्ञा मिल चुकी थी। भुवनमो-हनको यह बात मालूम हो गयी कि यह अपराधी निर्दोष है।

इसलिए वे उसे छुड़ा लेना चाहते थे। किन्तु जजके हृदयमें भुवनमोहनदासके प्रति असंतोषकी ज्वाला धधक रही थी इसलिए उन्होंने उनकी अपीलको रद्दकर दी और अपराधीके फाँसीकी सज़ाको क़ायम रक्खी। इस घोर अन्यायको देखकर कर्तव्यपरायण महाशय भुवनमोहनदासने निर्भीकता पूर्वक कहा कि "मेरे प्रति श्रीमान्‌का यदि कोई विरक्ति भाव है तो इसके कारण एक निरपराधी व्यक्ति न्यायविचार होनेसे वंचित हो फाँसी न पावे—यही मैं आशा करता हूं।" उनकी तेजो-गर्भ स्पष्ट बात न्यायाधीशके मनमें बैठ गयी और निरपेक्ष भावसे जजने मामलेका विचार किया। फलतः असामी बेदाग छूट गया।

पहले दासके पिता निष्ठावान बैष्णव थे। आप देश सेवामें भी मुक्तहस्त, तेजस्वी एवं निर्भीक थे। उस समय बहुतसे अँगरेजी शिक्षित नवयुवक हिन्दूधर्म्मकी पौत्तलिका परित्यागकर ब्राह्मधर्म्मानुयायी हुए और हो रहे थे। यद्यपि महाशय भुवनमोहनदासने भी अपने कुटुम्ब सहित ब्राह्म धर्म्म ग्रहण कर लिया, तथापि उनके हृदयमें किसी प्रकारका भी हिन्दूधर्म्मसे विद्वेष या उच्छृङ्खलता नहीं थी। परोपकारिता और दानशीलतामें वे भी अपने पिताके समान ही थे। उनके द्वारा बहुतसे दुखी परिवारका पालन होता था। जब कभी वे किसी दीनकी करुणामय कथा सुनते तभी वे उसकी सहायता कर उसके दुःखको दूर करनेका प्रयत्न करते ; यहाँतक कि अनेक अवसरोंपर उन्होंने इसके लिए

ऋण लेकर अपने कर्तव्यका पालन किया। भुवनमोहनकी यह उदारता, सहृदयता तथा दानशीलता ही उनके सर्वनाशका कारण है। एकबारकी बात है कि किसी व्यक्तिने भुवनमोहनकी उदारता सुनकर उनसे ४० हजार रुपयेकी जमानत कर लेनेका अनुरोध किया। उस व्यक्तिने अपने दुःखका करुणा जनकवर्णन कर अपनी शोचनीय अवस्थाका परिचय दिया। सत्य है, ठगोंकी कहीं भी कमी नहीं है। दयासागर भुवनमोहनदासने उस धूर्तकी बातोंमें आकर ४० हजार रुपयेकी ज़मानत कर ली। वह धूर्त तो भाग गया और महाशय भुवनमोहनदास उन रुपयोंके देनदार हुए। दानशीलता और परोपकारितामें धन देते देते उनके पास इतना रुपया नहीं था कि जिससे वे जमानतके रुपये दे सकते। इस कारण ऋण लेकर उन्हें ४० हजार रुपया सरकारमें दाखिल करना पड़ा। इन्हीं कारणोंसे उन्हें ऋणी होना पड़ा, नहीं तो एटर्नी होकर वे बहुतसा धन पैदा कर लिए होते। उनमें विलासिताका नाम निशानतक नहीं था, व्यर्थ काममें रुपया भी नहीं खर्च होता था तिसपर भी उनकी अन्तिम अवस्था कैसी शोचनीय हो गई, यह केवल उनकी उदारताका दोष है या यों कहिये कि असार संसारका दोष है। भुवनमोहनदासकी ऐसी शोचनीय अवस्था हो जानेके दोही कारण थे। एक तो अपर्याप्त दान और दूसरे किसीको रुपया देकर फिर उससे न माँगना। इस लिये उनका बहुतसा रुपया डूब गया। जो हो उपरोक्त बातोंके कहनेका अभिप्राय यह है कि पितामहकी दानशीलता, अतिथि

इसलिए वे उसे छुड़ा लेना चाहते थे। किन्तु जजके हृदयमें भुवनमोहनदासके प्रति असंतोषकी ज्वाला धधक रही थी इस-लिए उन्होंने उनकी अपीलको रद्दकर दी और अपराधीके फाँसीकी सज़ाको क़ायम रक्खी। इस घोर अन्यायको देखकर कर्तव्यपरायण महाशय भुवनमोहनदासने निर्भीकता पूर्वक कहा कि "मेरे प्रति श्रीमान्‌का यदि कोई विरक्ति भाव है तो इसके कारण एक निरपराधी व्यक्ति न्यायविचार होनेसे वंचित हो फाँसी न पावे—यही मैं आशा करता हूं।" उनकी तेजो-गर्भ स्पष्ट बात न्यायाधीशके मनमें बैठ गयी और निरपेक्ष भावसे जजने मामलेका विचार किया। फलतः असामी बेदाग छूट गया।

पहले दासके पिता निष्ठावान बैष्णव थे। आप देश सेवामें भी मुक्तहस्त, तेजस्वी एवं निर्भीक थे। उस समय बहुतसे अँग-रेजी शिक्षित नवयुवक हिन्दूधर्म्मकी पौत्तलिका परित्यागकर ब्राह्मधर्म्मानुयायी हुए और हो रहे थे। यद्यपि महाशय भुवनमो-हनदासने भी अपने कुटुम्ब सहित ब्राह्म धर्म्म ग्रहण कर लिया, तथापि उनके हृदयमें किसी प्रकारका भी हिन्दूधर्म्मसे विद्वेष या उच्छृङ्खलता नहीं थी। परोपकारिता और दानशीलतामें वे भी अपने पिताके समान ही थे। उनके द्वारा बहुतसे दुखी परिवारका पालन होता था। जब कभी वे किसी दीनकी करुणामय कथा सुनते तभी वे उसकी सहायता कर उसके दुःखको दूर करनेका प्रयत्न करते ; यहाँतक कि अनेक अवसरोंपर उन्होंने इसके लिए

ऋण लेकर अपने कर्तव्यका पालन किया। भुवनमोहनकी यह उदारता, सहृदयता तथा दानशीलता ही उनके सर्वनाशका कारण है। एकबारकी बात है कि किसी व्यक्तिने भुवनमोहनकी उदारता सुनकर उनसे ४० हजार रुपयेकी जमानत कर लेनेका अनुरोध किया। उस व्यक्तिने अपने दुःखका करुणा जनकवर्णन कर अपनी शोचनीय अवस्थाका परिचय दिया। सत्य है, ठगोंकी कहीं भी कमी नहीं है। दयासागर भुवनमोहनदासने उस धूर्तकी बातोंमें आकर ४० हजार रुपयेकी ज़मानत कर ली। वह धूर्त तो भाग गया और महाशय भुवनमोहनदास उन रुपयोंके देनदार हुए। दानशीलता और परोपकारितामें धन देते देते उनके पास इतना रुपया नहीं था कि जिससे वे जमानतके रुपये दे सकते। इस कारण ऋण लेकर उन्हें ४० हजार रुपया सरकारमें दाखिल करना पड़ा। इन्हीं कारणोंसे उन्हें ऋणी होना पड़ा, नहीं तो एटर्नी होकर वे बहुतसा धन पैदा कर लिए होते। उनमें विलासिताका नाम निशानतक नहीं था, व्यर्थ काममें रुपया भी नहीं खर्च होता था तिसपर भी उनकी अन्तिम अवस्था कैसी शोचनीय हो गई, यह केवल उनकी उदारताका दोष है या यों कहिये कि असार संसारका दोष है। भुवनमोहनदासकी ऐसी शोचनीय अवस्था हो जानेके दोही कारण थे। एक तो अपर्याप्त दान और दूसरे किसीको रुपया देकर फिर उससे न माँगना। इस लिये उनका बहुतसा रुपया डूब गया। जो हो उपरोक्त बातोंके कहनेका अभिप्राय यह है कि पितामहकी दानशीलता, अतिथि

परायणता तथा कवित्व शक्ति एवं पिताकी सहृदयता, स्वदेश प्रेम, निःस्वार्थ परोपकार स्पृहा तथा स्वार्थत्यागके भाव सम्पूर्ण रूपसे हमारे चरितनायक "श्रीयुक्त चित्तरंजनदास" के हृदयमें भी विद्यमान हैं।

इसी पवित्र कुलमें बंगला साल १२७७ कार्तिक तारीख २० तदनुसार सं० १८७० में पाटलडांगा स्ट्रीट कलकत्तामें हमारे चरितनायक श्रीचित्तरंजनदासका जन्म हुआ। जन्म होनेके कई वर्ष बाद उनके पिता भुवनमोहनदास भवानीपुर जा बसे। वहींपर बालक "चित्तरंजन" की शिक्षाका श्रीगणेश हुआ। भवानीपुरके "लन्दन मिशनरी सुसाइटी" के स्कूलमें वे प्रवेशिकाकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए और फिर स्थानीय प्रेसीडेन्सी कालेजमें भर्त्ती हुए। वहींसे आपने सं० १८६० में बी० ए० पास किया। चित्तरंजनदास जब स्कूलमें पढ़ते थे तभीसे उनकी प्रतिभा और स्मरण शक्तिको देखकर लोग चकित हो जाते थे। उनके सहपाठियोंमें कोई भी ऐसा नहीं था जो साहित्यमें उनकी बराबरी करता। आप जिस समय कालेजमें विद्याध्ययन कर रहे थे उसी समयसे प्रौढ़ लेख लिखने और जोशीली वक्तृता देनेमें अद्वितीय थे। कालेजमें साहित्य सभाके प्रधान कर्मचारी प्रोफ़ेसर लोग भी युवक चित्तरंजनदासकी विशिष्ट साहित्यिक प्रतिभा देखकर कहा करते थे कि "भविष्यमें किसी दिन चित्तरंजन साहित्य और समाजमें अग्रगण्य समझा जायगा।" दयालु परमात्माकी असीम कृपासे वही आशा आज सफल हो रही है।

बी० ए० पास करनेके बाद "चित्तरंजनदास"ने सिविलसर्विस परीक्षा देनेके लिए पितासे आज्ञा ले विलायतके लिए प्रस्थान किया। जहाजपर सवार होकर उन्होंने बड़े प्रेम और भक्तिसे भारतकी पवित्र भूमिको प्रणाम किया। जहाज मन्दगतिसे चल पड़ा, आश्चर्य जनक सामुद्रिक दृश्योंको देखकर "दास महाशय" के हृदयमें विचित्र भाव पैदा होने लगे। समुद्रयात्राकी अनेक प्रकारकी कठिनाइयां झेलकर आप सकुशल लन्दन पहुंच गये। वहां पहुंचकर आपने सिविल सर्विसकी परीक्षा देनेके लिए नियमित रूपसे पढ़ना शुरू किया। इसी समयमें भारतके सुप्रसिद्ध नेता स्वर्गीय दादाभाई नौरोजी भारतीय अभियोगको स्वयं विलायतकी पार्लमेण्ट महासभाके सामने प्रकट करनेके लिए पार्लमेण्टका मेम्बर होनेकी चेष्टा कर रहे थे। युवक चित्तरंजनदासको अपनी परीक्षा देने बाद उसका फल जाननेके लिए कुछ समयतक वहां रुकना पड़ा, इसलिए वे उस समय अपने पूज्य नेताके शुभ कार्यमें सफल होनेके लिए विलायतकी सभाओंमें उनके निर्वाचनका समर्थन करने लगे।

उन्होंने अपने भाषणोंमें यह बतलाना शुरू किया कि भारत-वासीका पार्लमेण्टमें सभासद होना इंग्लैण्ड और भारत दोनोंके लिए लाभदायक है। देशबन्धु चित्तरंजनदासके इस कार्यसे इंग्लैंडमें खलबली मच गयी और वहांके समाचार इनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। किन्तु जिस समय सिविलसर्विस परीक्षाका फल निकला उस समय देखा गया कि उस सालमें

जितने परीक्षामें पास हुए छात्रोंको नौकरी देनेकी बात थी उतने की अपेक्षा एक कम पायी गई। अर्थात् देशबन्धु दासहीका स्थान कम किया गया। कर्त्तृपक्षने यह देखा कि सिविलसर्विसकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुआ यह बालक भारतके किसी प्रदेशका उच्चपद प्राप्तकर भारतकी भलाईकी ओर अधिक झुकेगा, जिससे अंग्रेजोंकी स्वार्थ-सिद्धिमें बाधा पड़ेगी। यही कारण था कि उन्होंने श्रीयुत दासका निर्वाचन नहीं किया। यह देख उत्साही चित्तरंजनदास ज़रा भी विचलित नहीं हुए और प्रसन्नता पूर्वक कहा—"I came out first in the unsuccessful list." अर्थात् "मैंने अकृतकार्य परीक्षार्थियोंमें पहिला स्थान प्राप्त किया।"

इसके बाद आप बैरिष्टरीकी परीक्षाकी तैयारी करने लगे और सन् १८९३ में बैरिष्टरी पासकर आप भारत लौटे। विलायतमें रहकर आपने इस बातका अच्छी तरह अनुभव प्राप्तकर लिया कि भारतीयोंके प्रति अंग्रेजोंका क्या भाव है। गरीब देशकी अथाह सम्पत्ति खींचकर ब्रिटिश जाति आजदिन संसारमें किस प्रकार प्रधान बन रही है। उनकी प्रतिभा, स्वदेशप्रेम, व्यापार कलाकौशल आदि उन्नतिशील कार्यों को देखकर देशबन्धु दास महाशयके हृदयमें देशप्रेम तथा नवीन भावोंका संचार हुआ। भारत लौटकर आपने इंग्लैंड निवासियोंके विषयमें अनेक बातें बतलाईं और लोगोंको देशके कार्यक्षेत्रमें उतरनेका उपदेश दिया। देशबन्धुदासको सिविलसर्विस परीक्षामें सफलता प्राप्त न होनेका समाचार सुन उनके पिता तथा अन्यान्य आत्मीय जनोंको बड़ाही दुःख

हुआ। क्योंकि उस समय देशबन्धुदासके पिताकी आर्थिक स्थिति बड़ीही शोचनीय हो गयी थी। ऋणका सूद बराबर बढ़ता जा रहा था। बहुतसा रुपया चुका देनेपर भी वे सदा चिन्तित रहा करते थे। धर्मप्राण भुवनमोहन आशा लगाये थे कि पुत्र हाकिम होकर आवेगा और प्रतिमास खासी रकम लाकर मुझे शीघ्र ही ऋण जालसे मुक्त करेगा। किन्तु जब दास महाशयने घर लौटकर अपने पितासे यह कहा कि "मैं सिविल सर्विस परीक्षामें पास होनेपर भी द्वेषके कारण निर्वाचनमें नहीं लिया गया इसलिए बैरिष्टरी ही पास करके आया हूं,"– तब बड़ेही दुखी हुए। उन्होंने यह सोचा कि नयी बैरिष्टरीमें अभी उतनी आय नहीं होगी इसलिए उनकी सारी आशायें मिट्टीमें मिल गयीं। यहांतक कि उसी चिन्तासे वे बीमार पड़ गये। शीघ्र कर्ज टूटता न देख वे इन्सालवेन्ट हो गये। इतनेपर भी लोग उन्हें दिवालिया कहने लगे जिससे उन्हें और भी मानसिक वेदना होने लगी। पर इससे क्या होता है। देशबन्धु सिविलसर्विस परीक्षामें उत्तीर्ण क्योंकर होते जब कि अपने जीवनको मातृभूमिकी सेवामें अर्पण कर देनेका अटल भाव उनके हृदयमें विद्यमान था। सत्यही प्रतीत होता है कि भाग्य विधाताने देशबन्धुको इसीलिए दासत्व शृंखलामें आबद्ध नहीं होने दिया। क्योंकि सिविलसर्विसका उच्चपद प्राप्तकर यदि वे आते तो देशके जनसाधारणसे मिलनेका सुयोग उन्हें कदापि प्राप्त न होता और न देशके हितकार्यकी ओर ध्यान ही देते। अस्तु। भगवन्! आपने

जो देशबन्धुको दासताकी बेड़ीमें बांधे जानेसे बचाया है उसके लिए देश आपका चिरकृतज्ञ है।

आधुनिक पश्चिमीय सभ्यताका लीलाकेन्द्र एवं बिलासिता-प्रिय यूरोपकी भूमिमें रहकर भला किस मनुष्यका हृदय उस ओर न झुकेगा, और कौन उसका अनुकरण न करना चाहेगा? मनुष्यका स्वभाव ही ऐसा होता है कि जिसे वह सुन्दर और आनन्दमय पाता है उसीका अनुकरण करता है। हां, यदि किसीपर बाल्यकालसे ही असाधारण नैतिक शिक्षाका प्रभाव पड़ चुका हो तो उसकी बात दूसरी है। फिर भी एक बार तो वह बाहरी वेशमें रंग ही जायगा चाहे आन्तरिक विचार उसके अच्छे ढंगके ही क्यों न हों। ठीक यही हाल हमारे चरितनायक देशबन्धुका है। जब आप विलायत पहुंचे तब वहांका रंग ढंग देख साहिबी ठाटके विशेष पक्षपाती बन गये। साहिबी पहिनावा, साहिबी रहन-सहन आपको भली मालूम होने लगी, किन्तु हर समय उनके मनमें स्वदेशप्रेमके ही भाव विचरण किया करते थे। कोट पतलूनके भीतर होते हुए भी उनकी प्रकृतिमें अपने देशके प्रति परम अनुराग था।

उनके विलायत निवासकालमें जो एक विशिष्ट घटना हुई है उससे उपरोक्त बातकी सत्यता प्रमाणित होती है। सन् १८९२ ई० में जेम्समेकलिन नामक एक पार्लमेण्टके सदस्यने एकबार वक्तृता देते हुए प्रसंगानुसार कहा था कि "भारतके हिन्दू और मुसलमान दोनों गुलाम जातिके हैं और वे हमारी गुलामी कर रहे

हैं।" युवक देशबन्धु उस समय लन्दनमें कानून अध्ययन कर रहे थे। उनका स्वदेश प्रेमिक हृदय मेकलिनके इस भ्रष्ट विचार-से बहुत ही व्यथित हो उठा और उन्होंने क्रोधसे भभक कर कहा—आर्य जातिका इतना अपमान! जिसकी प्राचीन सभ्यताको ग्रहणकर अंग्रेज जाति आज अपनेको सभ्य बताने चली है उसकी इतनी बड़ी निन्दा!! ऐसा घृणित भाव!!! उन्होंने प्रयत्न करके इंग्लैंडमें रहनेवाले भारतीयोंको एकत्र कर एक विराट सभा की और उसमें मैकलिनकी असभ्यताका तीव्र प्रतिवाद किया। बृटिश जातिकी सारी भीतरी पोल खोल दी। जिससे वहांके प्रसिद्ध पत्रोंमें भी देशबन्धुके भाषणकी आलोचनाके प्रसंगमें इस विषयका जोरोंसे आन्दोलन मच गया। युवक चित्तरंजनके इस कार्यने वहांके बड़े बड़े राजनीतिज्ञोंकी आंखें खोल दीं। इसके बाद इंग्लैण्डके प्रतिष्ठित विद्वान मि० ग्लैडस्टनकी अध्यक्षतामें अंग्रेजोंकी एक विराट सभा हुई। उस सभामें देशबन्धु दासने भी अपनी ज़ोरदार भाषामें इस विषयकी समालोचना की। उधर तो थे महामति राजनीतिज्ञ मि० ग्लैडस्टन और इधर थे इक्कीस वर्षके छात्र देशबन्धु दास। किन्तु वाहरे चित्तरंजनदास! आपने उस समय अद्भुत कार्य कर दिखाया; अपने भाषणशक्तिकी पराकाष्ठा दिखा दी। सारा लन्दन हिला दिया। आपके इस कार्यसे वहांके लोगोंपर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि जेम्स-मेकलिनको सर्वसाधारणके सामने देशबन्धुदाससे माफी मांगनी पड़ी और पार्लमेण्टके सदस्य पदसे भी वह हटा दिये गये। देश-

बन्धुके इन कार्योंसे पता चलता है कि उनमें बाल्यावस्थासे ही कितना देशप्रेम और स्वदेशाभिमान था। क्यों न हो, मनुष्यके स्वाभाविक गुणोंका पता उसके पूर्वजोंका हाल जाननेसे ही लग जाता है। इस प्रकारकी छोटी छोटी घटनाओंसे ही मनुष्यका प्रकृत मनुष्यत्व बाहर होता है और उससे उसके भविष्यका पता लगता है।

द्वितीय अध्याय।

कर्म जीवनारम्भ और साहित्य सेवा।

सन् १८९३ में देशबन्धु चित्तरंजन दास स्वदेश लौटकर कलकत्ता हाईकोर्टमें बैरिष्ट्री करने लगे। अधिक ऋण हो जानेके कारण पिताको अत्यन्त चिन्तित देख पितृभक्त देशबन्धु दासने बैरिष्ट्री प्रारम्भ करते ही समस्त ऋणका भार अपने ऊपर ले लिया। किन्तु नयी बैरिष्ट्री होनेके कारण आय कम थी, इस लिये ऋण चुकानेमें अधिक रुपया नहीं दे सकते थे। महाजन लोग उनकी तरह तरहकी बातोंसे निन्दा करने लगे। इसीसे निरुपाय हो बैरिष्ट्री प्रारम्भ करते न करते ही देशबन्धुको पिता सहित इन्सालवेन्सी कोर्टकी सहायता ग्रहण करनेके लिए वाध्य होना पड़ा। यद्यपि किसीका रुपया मारनेका विचार उनका नहीं था तथापि समयपर रुपया न मिल सकनेके कारण लोग उन्हें दिवालिया कहकर कष्ट पहुंचाने लगे। कहनेका अभिप्राय यह कि यद्यपि मनुष्यकी आर्थिक स्थिति खराब होनेपर वह हमेशा चिन्तित और उत्साहहीन रहता है, अपनी मौलिक शक्तिको खो देता है, उसका मन किसी कार्यमें नहीं लगता और उसमें उसे

सफलता भी प्राप्त नहीं होती, तथापि उत्साही "देशबन्धु दास" अपनी चिन्ताको सीमाबद्ध ही रखते थे। उनका धैर्य, पुरुषार्थ और साहस ज्योंका त्यों बना रहा। वास्तवमें विपत्ति पड़नेपर धैर्य्य धारण करना ही महापुरुषोंका लक्षण है।

ऊपर इस बातका उल्लेख किया जा चुका है कि देशबन्धुकी बैरिष्ट्रीके व्यवसायकी अवस्था पहिले शोचनीय थी। ऐसी अवस्थामें वे पूर्ण प्रतिभावान होते हुए भी बैरिष्ट्रीसे अच्छी आमदनी न होने तथा पैत्रिक ऋण और अनेक प्रकारके आर्थिक दबावके कारण अपनी बुद्धिका विकाश नहीं कर सके थे। किन्तु एक विषयमें इच्छा पूर्ण न होनेके कारण उन्हें विशेष मानसिक कष्ट होता था। वह यह कि दिवालिया कहे जानेके कारण वे निःसंकोच हो समुचित रूपसे देशके कार्यमें भाग नहीं ले सकते थे। यदि उनपर ऐसी कठिन अवस्था न आयी हुई होती तो अबसे बहुत पहिले ही वे सब प्रकारके राजनीतिक, सामाजिक आदि कार्योंमें योग दानकर अपनी असाधारण देश प्रेमिकताका परिचय दे चुके होते। जिस अद्भुत कार्यदक्षता तथा स्वाभाविक स्वदेशप्रेमद्वारा वे इस समय सर्वसाधारणके हृदयपर अपना अधिकार जमा लिए हैं उसके द्वारा वे बहुत पहले ही जन-साधारणका नेतृत्व सम्मान प्राप्त कर चुके होते। किन्तु दुःख है कि उस समय देशबन्धुकी आर्थिक और सामाजिक अवस्था इस कार्यके करनेके अनुकूल नहीं थी। मार्गमें अनेक रुकावटें पैदा हो गयी थीं। संयोगवश उन्हें अपने व्यवसायमें सफलता प्राप्त

होनेका सुअवसर प्राप्त होने लगा और देश सेवाकी ओर उनका अधिक झुकाव प्रारम्भ हुआ।

ईसवी सन् १६०७ बंगाल प्रान्तका ही नहीं सारे भारतवर्षका चिरस्मरणीय साल है। इसी सालमें स्वतन्त्रता देवीने पाश्चात्य देशोंसे होते हुए भारतमें प्रवेश किया है। देवी देवताओंके आगमनमें मार्गसाफ करनेके लिए डाकिनी शाकिनी आगे चलती हैं; अर्थात् खून खराबी मचती है। सन् १६०७ की खून खराबी मानो हमारे देशमें स्वतन्त्रता देवीके प्रवेशकी सूचना देनेके लिए हुई थी। समस्त भारतवर्षकी इच्छाके विरुद्ध बंगभग करके लार्ड कर्जनने जो अमानुषिकताका परिचय दिया उससे देश स्वतन्त्र होनेके लिए लहलहा उठा। जनताके हृदयमें राजनीतिक भाव प्रबल हो उठे। सारे देशमें सरकारके अन्याय और अत्याचारके विरुद्ध भाव फैलने लगे और उसी समय स्वदेशीके महान आन्दोलनकी सृष्टि हुई। उसी समय अधिकारियोंने हमारे हजारों निरपराध देश बन्धुओंको फांसी दे तथा जेल भेजकर अपने अन्याय, अनीति और ओछेपनका परिचय दिया; किन्तु वीर देश बन्धुओंके अपूर्व साहस, त्याग, और निर्भीकताका प्रभाव हमारे देशके नवयुवकोंपर पड़ा और वे अपनी मातृभूमिको दासताकी बेड़ीसे मुक्त करनेके लिए दृढ़ता और साहसके साथ हजारोंकी संख्यामें देशके कार्यक्षेत्रमें उतर पड़े। देश प्रेमकी इस महान शक्तिको प्राप्त कर जनताके जोशका वारापार न रहा। सब लोग स्वदेशके लिए प्राण दे देना अपना कर्तव्य समझने लगे।

इसी प्रबल आन्दोलनके श्रोतको बन्द करनेके लिए थोड़े दिनों बाद बंगालमें खूब जोरोंसे दमननीति शुरू हुई, इसी समय परम देशभक्त महात्मा अरविन्द घोषके विरुद्ध षड्यंत्रका अभियोग लगाया गया। महात्मा अरविन्दके हितैषी लोग कितने ही वकील बैरिष्ट्रोंके पास गये किन्तु किसीका साहस नहीं हुआ कि सरकारसे भिड़कर इस महाप्राणकी पैरवी कर उन्हें अन्यायसे बचावे। कौन ऐसा विपन्न बाधक है जो अपना समय नष्टकर सरकारका कोरा भाजन बने? इस सुयोगको हमारे वीर चरित नायक महाशय देशबन्धु दासने हाथसे न जाने दिया और उसी समय महात्मा अरविन्दसे कहा "प्रिय घोष महाशय! आप चिन्ता न करें आपकी ओरसे पैरवी करनेके लिए मैं तैयार हूं।" म० अरविन्दने यह सोचकर कि एक साधारण और नया बैरिष्टर मेरी पैरवी कर सरकारके भयंकर चंगुलसे छुड़ानेमें कैसे समर्थ होगा। उन्होंने देशबन्धु दासको हृदयसे लगाकर कहा "प्रियदास महाशय! क्या यह बात आप सच्चे हृदयसे कह रहे हैं?" निर्भीक चित्तरंजन दासने दृढ़ता पूर्वक कहा, हां घोष महाशय! "आप मेरी बातपर विश्वास करें।" इस प्रकार सरकारकी ओरसे दिग्गज कानून ज्ञाता मि० नार्टन खड़े हुए और बिपन्न अरविन्दकी ओरसे हमारे वीर चरितनायक चित्तरंजन दास। सारांश यह कि शेर और बकरीका सामना था, किन्तु धन्य देशबन्धु! आठ महीनेतक महाशय अरविन्द घोषका मामला चलता रहा, दिनपर दिन मानो कुरुक्षेत्रका संग्राम भीषण स्वरूप धारण

करता गया और तू दूने उत्साह, निर्भीकता और दृढ़तासे अग्रसर ही होता गया। देशबन्धु दासने कोर्टमें इतने वार किये और इतने कठिन-कठिन प्रश्न उपस्थित किये, कि मि० नार्टनको कई बार चुप रह जाना पड़ा।

कहां तो अरविन्दको सरकार फांसीपर चढ़ानेके मनसूबे गांठ रही थी और कहां अब हमारे चरितनायककी विचित्र प्रतिभासे महात्मा अरविन्द बेदाग़ छूटते दिखायी देने लगे। कलकत्ता हाईकोर्टके न्यायाधीश मि० उडरफकी अदालतमें यह मामला था। महात्मा अरविन्दके मामलेका फैसला सुननेके लिए हर पेशीमें सहस्रों मनुष्य अदालतके अहातेमें डटे रहते थे। मुक़द्दमेंके आख़िरी दिन, जिस समय देशबन्धु कड़कते हुए शब्दोंमें महात्मा अरविन्दका पक्ष समर्थन करने लगे, उस समय जज महोदय मि० उडरफ कभी तो रोने लगते और कभी यकायक हंस पड़ते थे। अन्तमें देशबन्धुकी हृदयग्राही वक्तृता समाप्त होते ही, जजने फैसला सुनाया—"मि० अरविन्द बेकसूर होनेके कारण छोड़ दिये जाते हैं।" फिर क्या था देशबन्धुका यह अद्भुत पराक्रम भारतके कोने कोनेमें बिजलीकी तरह फैल गया। और उसी दिनसे देशबन्धुका भाग्यपट खुल गया—बुरे दिनोंका साम्राज्य उनपरसे उठ गया।

अब देशबन्धुके वे दिन नहीं रहे। बड़े-बड़े लोग अब आपको सादर उच्च आसन देने लगे। उनका यश-सौरभ चारों ओर फैल गया। म० अरविन्दके इस मामलेमें देशबन्धुदासकी

दो महीनेतक बहुत बड़ी आर्थिक हानि सहनी पड़ी। इस स्वार्थत्यागसे उनकी और भी प्रतिष्ठा होने लगी। इसके कुछ दिन बाद ही ढाकाके षड्यंत्रका मुक़द्दमा भी उन्होंने बिना कुछ पारिश्रमिक लिये अपने हाथमें लिया, जिससे उनकी प्रतिष्ठा और भी बढ़ गयी। लोग उनके त्यागकी सहस्र मुखसे भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। थोड़े दिनोंमें ही देशबन्धु देशके प्रधान बैरिष्टरोंमें गिने जाने लगे और अब उन्होंने खूब धन और कीर्ति उपार्जन करना आरम्भ किया। अब देशबन्धु दुखियोंका दुःख दूर करने, अनाथोंको आश्रय-प्रदान करने, निःसहाय, निर्धन छात्रोंको विद्याध्ययनकी सुविधा कर देनेके लिए उपार्जित धन, मुट्ठीकी धूलके समान समझने लगे। थोड़े ही दिनोंमें वे पितृऋणसे मुक्त हो दिवालिया नामके कलंकको मिटानेके लिए तत्पर हुए एवं बहुत शीघ्र उनकी यह इच्छा पूर्ण भी हो गयी। समस्त ऋण परिशोधकर देशबन्धुने कर्तव्य-परायणता तथा स्वार्थत्यागका महान् आदर्श दिखाकर संसारको चकित कर दिया। इसी कारणसे ही कलकत्ता हाईकोर्टके जस्टिस मि०फ्लेचरने कहा था—“किस महापुरुषने दिवालिया बनकर सारा ऋण स्वीकार करके उसे चुका दिया, इस प्रकारका दृष्टान्त संसारके इतिहासमें मैंने पहला देखा।” इसी अद्भुत धर्म-निष्ठासे देशबन्धु एक नवीन तेजसे सुशोभित हुए।

यह ऊपर बताया जा चुका है कि “देशबन्धुदास” अपने विद्यार्थी जीवनमें ही साहित्यका अच्छा ज्ञान प्राप्त कर चुके थे।

काव्य साहित्यमें भी आपकी प्रतिभा बहुत चढ़ी-बढ़ी थी; विलायत जानेसे पहिले ही आपमें काव्यशक्तिका अच्छा ज्ञान हो चुका था; विलायतसे लौट आनेपर कुछ ही दिन बाद, सन १८६५ ई० में आपका लिखा हुआ पहिला काव्यग्रन्थ "मालञ्च" प्रकाशित हुआ। उसके कई वर्ष बाद अर्थात् सन् १८६८ ई०में विजनीस्टेटके भूतपूर्व मैनेजर स्वर्गीय वरदा हालदार महाशयकी सौभाग्यवती कन्या श्रीमती वासन्ती देवीके साथ हमारे चरितनायक देशबन्धु दासका विवाह हुआ।

जिस अलौकिक रचनाके कारण देशबन्धुका साहित्यमें इतना बड़ा नाम हुआ है, उसका नाम है "वारविलासिनी।" इस काव्य ग्रंथमें इस प्रकार सहृदयता और इतना सुन्दर करुणरसका भाव है, कि इसकी समानता एशियाके प्रसिद्ध कवि शिरोमणि रवीन्द्रनाथ टागोरकी विख्यात पुस्तक "पतितार" से की जाती है। इसके अतिरिक्त माला, सागर संगीत, अंतर्य्यामी, किशोर-किशोरी आदि और भी बहुतसी पुस्तकें आपकी लिखी हुई वंग साहित्यकी शोभा बढ़ा रही हैं। देशबन्धुके काव्य ग्रन्थोंको देखनेसे यह निश्चय होता है कि उनका हृदय वैष्णव-धर्मके सिद्धान्तोंसे भरा हुआ है। इसी वैष्णव-धर्मका प्रचार करने तथा वंग-साहित्यको एक नवीन रूप देनेके अभिप्रायसे देशबन्धुदास महाशयने सन् १६१५ ईसवीमें "नारायण" नामकी सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका प्रकाशित की। यह पत्रिका अब भी सुन्दर विचारों तथा प्रसिद्ध-प्रसिद्ध विद्वानोंकी ज़ोरदार लेखनीसे प्रेरित विचारों-

को लेकर प्रकाशित होती है। इसकी भाषा ऐसी ओजस्विनी और सरल होती है कि थोड़े ही दिनोंमें इसकी गिनती वंग साहित्यके प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओंमें होने लगी है।

सन् १९१७ ई०में जिस समय बंगलाके साहित्यिक विद्वानों-की वंगीय सम्मिलन सभाका वार्षिक अधिवेशन बांकीपुरमें हुआ था, उस समय उस सम्मिलनके देशबन्धुदास ही सभापति चुने गये थे। पश्चात् दूसरे सालमें ढाकाके साहित्य सम्मिलनके वार्षिक अधिवेशनमें भी वे अभ्यर्थना समितिके सभापति चुने गये। देशबन्धुके इन महत्वपूर्ण कार्य्योंसे पाठकोंको ज्ञात हो गया होगा, कि हमारे चरितनायकका साहित्यिक ज्ञान कितना अद्वितीय है।

तृतीय अध्याय।

पारिवारिक जीवन, धार्मिक विचार तथा समाज संस्कारकी चेष्टा।

मनुष्यके अन्तःकरणके विकासका उसके पारिवारिक जीवनसे बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध होता है। इसलिए उसका भी उल्लेख करना आवश्यकीय है। देशबन्धु दासकी पारिवारिक जीवनमें बहुतसी कठिन-कठिन परीक्षाएं हुई हैं। दास महाशय अपने पिताके ज्येष्ठ पुत्र हैं, इसलिए गृहस्थीका सारा भार आपहीपर आ पड़ा। उन्होंने अपने छोटे भाइयों और बहिनोंको उत्तम शिक्षा मिलनेकी व्यवस्था कर दी, और समयानुसार बहिनोंका विवाह भी योग्य व्यक्तियोंसे कर दिया। दासके दो भाई और पांच बहिनें थीं। उन्होंने दोनों भाइयोंको बैरिष्टरी पास करायी, किन्तु उन लोगोंने दासको दुःख ही पहुंचाया, उनकी बड़ी बहिन थोड़ी ही अवस्थामें विधवा हो गईं। उनके एक पुत्र और कई कन्याएं थीं। विधवा होनेके कारण बच्चों सहित उनके देख भाल करनेका भार देशबन्धु ही पर पड़ा। दासकी और एक बहिन भी असमयमें ही चल बसीं। ये दोनों मृत्युएं उनके हृदयको व्यथित कर ही रही थीं, कि उनके सर्वकनिष्ठ भाई वसंत रंजन भी बैरिष्टरीमें अच्छी

को लेकर प्रकाशित होती है। इसकी भाषा ऐसी ओजस्विनी और सरल होती है कि थोड़े ही दिनोंमें इसकी गिनती वंग साहित्यके प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओंमें होने लगी है।

सन् १९१७ ई०में जिस समय बंगलाके साहित्यिक विद्वानों-की वंगीय सम्मिलन सभाका वार्षिक अधिवेशन बांकीपुरमें हुआ था, उस समय उस सम्मिलनके देशबन्धुदास ही सभापति चुने गये थे। पश्चात् दूसरे सालमें ढाकाके साहित्य सम्मिलनके वार्षिक अधिवेशनमें भी वे अभ्यर्थना समितिके सभापति चुने गये। देशबन्धुके इन महत्वपूर्ण कार्य्यों से पाठकोंको ज्ञात हो गया होगा, कि हमारे चरितनायकका साहित्यिक ज्ञान कितना अद्वितीय है।

तृतीय अध्याय ।

पारिवारिक जीवन, धार्मिक विचार तथा समाज संस्कारकी चेष्टा ।

मनुष्यके अन्तःकरणके विकासका उसके पारिवारिक जीवनसे बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध होता है। इसलिए उसका भी उल्लेख करना आवश्यकीय है। देशबन्धु दासकी पारिवारिक जीवनमें बहुतसी कठिन-कठिन परीक्षाएं हुई हैं। दास महाशय अपने पिताके ज्येष्ठ पुत्र हैं, इसलिए गृहस्थीका सारा भार आपहीपर आ पड़ा। उन्होंने अपने छोटे भाइयों और बहिनोंको उत्तम शिक्षा मिलनेकी व्यवस्था कर दी, और समयानुसार बहिनोंका विवाह भी योग्य व्यक्तियोंसे कर दिया। दासके दो भाई और पांच बहिनें थीं। उन्होंने दोनों भाइयोंको बैरिष्टरी पास करायी, किन्तु उन लोगोंने दासको दुःख ही पहुंचाया, उनकी बड़ी बहिन थोड़ी ही अवस्थामें विधवा हो गई। उनके एक पुत्र और कई कन्याएं थीं। विधवा होनेके कारण बच्चों सहित उनके देख भाल करनेका भार देशबन्धु ही पर पड़ा। दासकी और एक बहिन भी असमयमें ही चल बसीं। ये दोनों मृत्युएं उनके हृदयको व्यथित कर ही रही थीं, कि उनके सर्वकनिष्ट भाई वसंत रंजन भी बैरिष्टरीमें अच्छी

ख्याति करके उन्हें हमेशाके लिए छोड़ स्वर्ग सिधार गये। अब देशबन्धुके एकमात्र जीवित सहोदर भाई श्रीयुक्त प्रफुल्ल रंजन दास हैं, जोकि इस समय पटना हाईकोर्टके विचारपति (जज) हैं।

श्रीयुक्त प्रफुलरंजन दासका भी अंग्रेजी साहित्यमें बहुत ऊंचा ज्ञान है। उनकी बनायी हुई कविताएं अंग्रेज़ विद्वानोंमें आदरकी दृष्टिसे देखी जाती हैं। देशबन्धु महाशयकी एक बहिन, जिनका नाम अमलाकुमारी गुप्ता है, सुप्रसिद्ध संगीतज्ञा थीं। अभी उन्होंने कलकत्ता कांग्रेसमें वंदेमातरम्‌का गान गाकर श्रोताओंमें एक नवीन भावकी सृष्टि करके सबको चमत्कृत कर दिया था। पश्चात् पुरुलियाका अनाथाश्रम स्थापित करके अपने बड़े भाई हमारे चरितनायककी आर्थिक सहायतासे वह वहांपर देशके दुःखियों तथा अनाथोंकी सेवा करने लगीं। उसी समय उस पुण्य कार्यको करते ही करते अस्वस्थ हो गईं और थोड़े ही दिनों बाद उनका कर्ममय अविवाहित जीवन शेष हो गया। दैव दुर्भाग्यसे उन्हीं दिनोंमें देशबन्धुके एक बड़े ही योग्य बहनोई भी संसारसे एकदम नाता तोड़कर चले गये। इस प्रकार बहुतसी शोकजनक घटनायें संसारमें देशबन्धुपर वज्रप्रहार करती रहीं। किन्तु वैष्णव-धर्मके उच्च भावमें लीन हो श्रीमद्भगवद्गीताके आदर्शको सामने रख देशबन्धु सांसारिक सुख और दुःखोंको लीलामय भगवान्‌के हाथमें सौंपकर कर्मपथपर धैर्य्य और साहस पूर्वक डटे रहे।

इन सब पारिवारिक विछोहोंके संताप सहन करने पड़ ही

रहे थे, कि इनके पूज्य माता-पिताके भी जीवनका दीपनिर्वाण हो गया। माताकी मृत्युके बाद देशबन्धुने हिन्दू-धर्मके अनुसार क्रिया कर्म किया। दग्ध कर्मकी शुद्धि न होनेतक घरमें गीता-पाठकी व्यवस्था कर दी। अस्तु। माताके मृत्युके लगभग छः मास बाद ही इनसे पितृवियोग भी हो गया। इतने थोड़े समयमें माता-पिता दोनोंसे विहीन होनेके कारण देशबन्धुको बहुत ज्यादा दुःख हुआ। पर कर ही क्या सकते थे। दैवेच्छापर किसका वश है?

उपरोक्त दुःखोंके सहनेमें देशबन्धुको औरोंकी अपेक्षा धर्म-पत्नी श्रीमती बासंती देवीसे विशेष शांति मिलती थी। हिन्दू धर्मके शास्त्रकारोंने सहधर्म्मिणीकी जो व्याख्या की है, वह सब बासंती देवीमें मौजूद हैं। वह शोकमें देशबन्धुको सान्त्वना देतीं, साहित्य-चर्चामें उनकी सहयोगिनी बनतीं, उनकी बनायी कवि-ताओंको निष्पक्ष भावसे पढ़कर उसकी यथार्थ आलोचना करतीं, तथा स्वामीके देशव्रतके समय उनकी सहकर्म्मिणी बनती थीं। श्रीमती बासंतीदेवीने विश्वविद्यालयकी परीक्षाएं पासकर कोई उपाधि तो नहीं प्राप्त की थी पर वे अंग्रेजी और बंगला साहित्यकी विशेष मर्मज्ञा अवश्य हैं। संस्कृत साहित्यका भी उनमें साधा-रण ज्ञान है। कहनेका अभिप्राय यह कि देवी बासंती योग्य पतिकी योग्य पत्नी हैं। सन १९१९ ई० में अमृतसरके वार्षिक अधिवेशनमें बासन्ती देवी अपनी विशेष योग्यताके कारण स्त्री सभाकी अध्यक्षा चुनी गयी थीं। उनके देवर (द्विवर) तथा

ननद उन्हें माताके समान मानती थीं। कुटुम्बसे वह बहुत ही प्रेम रखती हैं। देवी वासन्ती एक प्रखर बुद्धिशालिनी, करुणा-मयी, दानशीला, तथा परोपकारिणी आर्य्यललना हैं।

देशबन्धु दास जाति-भेद नहीं मानते हैं। वैदिक कालके हिन्दू धर्मको ही आप अधिक पसंद करते हैं। देवी देवताओंकी मूर्त्तियोंमें आपका पूर्ण अनुराग था और है। वैदिक धर्मोंको जाननेके लिए आपने एक अच्छे वेदज्ञाता पंडितको रखकर वेदका अध्ययन किया था। तदनुसार ही आपने अपनी शुद्धि भी की। उनके एक पुत्र और दो कन्याएं हैं। जाति भेद न रखनेके कारण दाससे अपनी धर्मपत्नीके साथ कभी कभी वादविवाद भी होता रहता था। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती वासंती देवी ब्राह्मण पुत्री हैं। जिस समय आपने अपनी ज्येष्ठा कन्याको एक हिन्दूमतानु-यायी कायस्थ पात्रको देनेका विचार किया, देखा कि समाजमें बड़ी सनसनी फैल गयी है। उस विवाहमें आप ब्राह्मण पुरो-हितको भी बुलाना नहीं चाहते थे। इस विषयपर पत्नीके साथ उनका खूब विवाद हुआ। आपकी इच्छा यह थी कि जाति चाहे जो हो, अच्छा पंडित देखकर पुरोहित नियुक्त करनेसे ही शुभ कार्य्य अच्छी तरह किया जा सकता है। जब विवाहकी तिथि करीब आगयी और आपका विचार परिवर्त्तन नहीं हुआ, तब एक दिन इसो विषयको लेकर संध्या समय फिर पत्नीके साथ आप-का पांडित्य युद्ध आरम्भ हुआ। वासंती देवी ब्राह्मण पुरोहितकी पक्षपाती थीं। बहुत देरतक तर्क होने बाद दास महाशय रंज होकर

वहांसे चले गये। बहुत रात्रि बीत जानेपर भी जब वापस नहीं लौटे तब वासंती देवी उनका पता लगानेके लिए बाहर आयीं। देखा कि चित्तरंजन एक जगह बैठे हुए मानसिक चिंतामें निमग्न हैं। श्रीमतीजी समीप जाकर बोलीं "प्राणनाथ! आप इस विषयको अच्छी तरह विचार करके देखिये, आप जहां समाजके सुधार करना चाहते हैं, वहां उसका अपकार होगा। इस समय यदि आप एकबार ब्राह्मण पुरोहितको न बुलाकर कन्याको विवाह देंगे, तो आपका सुधार और आदर्श कोई भी न मानेगा। और इस समय यदि आप इस दासीपर अनुग्रह करके उसकी बातोंपर विचार कर मान लेंगे, तो लोग आपका आदर्श ग्रहणकर सकेंगे एवं आपका उद्देश्य भी सफल होगा। इसलिए इस समय आपका ब्राह्मण पुरोहितको बुलाना ही उचित है।" इतना सुनते ही महाशय देशबन्धु मानों सोतेसे जाग गये और लम्बी सांस लेकर बोले—"ओः, तुमने आकर हमें क्या दिखा दिया।" अस्तु देशबन्धुकी अशांति दूर हुई और फिर बालिकाका विवाह ब्राह्मण पुरोहितोंद्वारा ही कराया। इस प्रकार कई बार अशांतिके समय देशबन्धु श्रीमतीजीसे सांत्वना पाते थे। धन्य हो देवी वासंती! यदि आज तुम्हारे समान भारतमें देवियोंकी भरमार होती, तो आर्य्य संतानोंकी यह दशा कदापि न होती। सत्य है; स्त्री शिक्षासे क्या नहीं हो सकता।

चतुर्थ अध्याय।
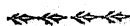
परोपकारिता और दानशीलता।

परोपकारिता और दानशीलता देशबन्धुका पैतृक-गुण है। उनका दान उनकी विपुल आयके अनुरूप था। उन्होंने कभी धन संचयको अपना लक्ष्य नहीं बनाया। यदि वह धन संचय करते तो आज बंगालके बैरिष्टरी व्यवसायी धनी पात्रोंमें कदाचित् सर्वप्रधान गिने जाते। किन्तु दीन दुखियोंहीके लिए आपकी आमदनी खर्च होती थी। इस समय, जब कि आप सर्वस्व त्याग कर देशके लिए भीखकी झोली लेकर द्वार-द्वार [
फिर भी दरवाजेसे कोई भी दुखिया खाली हाथ नहीं फिरने पाता। देशबन्धु इस घटनाको अक्षरशः चरितार्थ कर रहे हैं कि "एक दयालु दुखिया भीख मांगकर खानेको लाया। जब वह उसे खाने बैठा तो एक क्षुधार्त्तकी कातर-ध्वनि सुनायी पड़ी। दयालु भिक्षुक आप तो भूखा रह गया और उस क्षुधार्त्तकी प्राण-रक्षा की।"

देशबन्धु महाशय अधिकांश दान गुप्त रूपसे किया करते थे। यहांतक कि किसी-किसी दानको उनके घरवाले भी नहीं जानते थे। न जाने कितने निर्धन विद्यार्थियोंके भरण पोषणका

भार स्वयं उठाकर आपने विद्याध्ययन कराया है। विद्या तथा देशको उन्नति करनेवाली प्रायः सभी संस्थाओंको आपसे पूरी सहायता मिलती थी। पुरुलियाके अनाथालयमें—जिसका ज़िक्र पहले किया जा चुका है, जिसकी सेवामें आपकी बहिन स्वर्गीया कुमारी अमलाने अपना प्राण ही अर्पण कर दिया, प्रतिमास दो हज़ार रुपये खर्च होते थे। नवद्वीप (नदिया) के श्री नित्यानन्दाश्रमको जिसमें बहुतसे अनाथोंको आश्रय दिया जाता था, एकबार आपने दो लाखका दान गुप्त रूपसे दिया था। यह दान किसीको भी मालूम नहीं था। बहुत दिनों बाद जब कलकत्तेके थियासाफिकल हालमें भाषण करते हुए आश्रमके व्यवस्थापक पं० कुलदा प्रसाद मल्लिक भगवद् रत्न महोदयने यह भेद खोला, तब सबको मालूम हुआ। श्रोतागण इस गुप्त दानको सुनकर विस्मित हो उठे और दानवीर देशबन्धुके सहायताकी मुक्तकंठसे प्रशंसा करने लगे। वास्तवमें धर्मशास्त्रानुसार दान वही सर्वश्रेष्ठ है, जो हमारे चरितनायककी तरह नामके लिए न दिया जाय। इसके अतिरिक्त सन् १९१८ ई० में आपने भवानीपुरमें भी अनाथालय खोला, जिसमें इस समय अंधे, लूले लंगड़े आदि ढाई सौ अनाथोंकी रक्षा हो रही है।

अभी दो वर्ष हुए जब पूर्व बंगालमें भीषण अकाल पड़ा था, तब देशबन्धुने दश हज़ारकी सहायता दी और घूम-घूमकर चन्दा एकत्र किया। उस समय वहांकी सहायतार्थ आपके लड़के और लड़कियां भी गली-गलीमें भीख मांगते फिरते थे। इस प्रकार

न जाने कितनी ही बार आपने ग़रीबोंकी सहायता तन, मन और धन तीनोंसे की हैं। क्योंकि इधर कई वर्षोंसे इन गौरांग महाप्रभुओंके शासनकालमें हर साल भारतका कोई न कोई प्रान्त वृहत् स्मशान बनता ही गया है । क्यों न हो, देशबन्धुका वास्तवमें जन्म ही दुखियोंके दुःखमें सम्मिलित होनेके लिए हुआ है। आपके हार्द्दिक भावोंका पता आपके लिखित काव्यग्रन्थोंसे चलता है कि उनमें कितनी दया, देशप्रेम, और कष्ट-सहिष्णुता-शक्ति पहलेहीसे विद्यमान है।

पंचम अध्या

राजनीतिक जीवन और देशप्रेम।

पिछले अध्यायोंमें इसका उल्लेख किया जा चुका है, कि चित्त-रंजनदासकी राजनीतिक आंदोलनके साथ पूर्ण सहानुभूति थी, पर आर्थिक स्थिति विशेष शोचनीय होनेके कारण बहुत दिनों-तक आपको उससे दूर रहना पड़ा। आर्थिक क्लेशोंके मिटते न मिटते ही आपकी पुरानी अभिरुचि जाग उठी और सार्वजनिक कामोंमें भाग लेना आरम्भ किया। देशकी आर्त्त ध्वनिने आपके हृदयको बांध लिया।

योंतो समय-समयपर देशके प्रत्येक कार्य्योंको महाशय देश-बन्धु करते ही आये हैं—पर पिछले सभी कार्य्योंमें आपका पंजा-बमें किया हुआ कार्य्य बड़े ही महत्वका है। ता० १० दिसम्बर सन् १९१७ ई० में जिस समय कि भारत सरकारने भारतीय आंन्दोलनको मिटा देनेके लिए, देशके लाख चिल्लानेपर भी भार-तकी रही-सही स्वतंत्रताका अपहरण करनेवाला अन्यायी और अत्याचारी कानून 'रालट ऐक्ट' पास किया, उस समय म० गांधीने और कोई उपाय न देख सत्याग्रहकी इस प्रकार घोषणा की :—

"यह भलीभांति समझते हुए कि १९१९ का इंडियन क्रिमिनल

लॉ एमेंडमेंट बिल नं० १ और १६१६ का क्रिमिनल ला इमर्जेंसी पावर्स बिल नं० २ न्याय-रहित, न्याय और स्वतंत्रताके सिद्धान्तोंके विरुद्ध हैं। व्यक्तियोंके उन प्रारम्भिक अधिकारोंके नाशक हैं, जिनपर जनसमाज और स्वयं राज्यकी रक्षा निर्भर है। हम सत्य प्रतिज्ञा करते हैं, कि इन बिलोंके कानून बननेपर और जबतक ये लौटाये न जायंगे, नम्रता पूर्वक इन तथा उन अन्य कानूनोंका पालन करनेसे इनकार करेंगे, जिनका पालन न करना नियुक्त होनेवाली कमेटी ठीक समझेगी। हम यह भी प्रतिज्ञा करते हैं कि इस लड़ाईमें हम नेकनीयती से सत्यका पालन करेंगे। किसीकी जान और मालपर कोई भी आक्रमण न करेंगे।"

हमारे चरितनायक भी म० गांधीके आदेशानुसार सत्याग्रही हुए और समस्त बंगालमें धूम मचा दी। सत्याग्रह सम्मेलनके विराट् जन-समूहके सम्मुख कलकत्तेमें आपने सत्याग्रहके सम्बन्धमें इस प्रकार वक्तृता दी कि जनतामें नवीन जागरणकी बिजली नसनसमें दौड़ गयी। आपने कहा—"आज म० गांधीके सत्याग्रहका दिन है। आज बंगालियोंके हृदयकी वेदना प्रकाश करनेका दिन है। आज अपनी जातिकी विपत्तिके दिनमें अपने जातिकी आत्माका ही अनुसंधान करना चाहिये। "नायमात्माबलहीनेन लभ्यः।" किन्तु यह किसका बल है? पाशव बलसे आत्मा नहीं प्राप्त हो सकती। यह प्रेमका बल है। यही म० मोहनदास करमचन्दकी आज्ञा है और यही समग्र भारतकी आवाज है। इसे सार्थक करनेसे स्वार्थपरता, हिंसा, घृणा और विद्वेषको

विसर्जन करना ही होगा। हमलोगोंने रालट ऐक्ट्के विरुद्ध क्यों आन्दोलन उठाया? इसलिए कि हमलोग जानते हैं कि इस रालट ऐक्टके चलनेसे हमारी राष्ट्रीय जागृतिमें बाधा उपस्थित होगी। उन्हीं बाधाओंको अतिक्रम करनेके लिए हिंसा और द्वेषसे अलग रहना पड़ेगा। म० गांधीने कहा है कि शत्रुकी घृणा और हिंसा नहीं करनी चाहिये, क्योंकि प्रेमकी जय अनिवार्य्य है। यह प्रेम और धर्मका आंदोलन है, जातीय जीवनका उदय है। इस आंदोलनको सफल करनेके लिए आत्मनिवेदन ही उपाय है। शांति पूर्वक सम्पूर्ण विघ्न-बाधाओंको तुच्छ समझ प्राणके अनुरागमें आत्मनिवेदन करना चाहिये।"

म० जीने ६ ठी अप्रैल सन् १९१९ को उपवास और हड़तालका दिन निश्चित किया। जो देशभरके सभी भागोंमें यहांतक कि गांव गांवमें मनाया गया। बस इसीके कारण सत्याग्रहपर सरकारी दुराग्रह आरम्भ हुआ। अहमदाबाद, कलकत्ता आदिमें तो अल्प संख्यामें ही लोग गोलीके शिकार बने, पर पंजाबको— जिसने कि जर्मन युद्धके समय अपनी जान लड़ाईमें देकर वृटिश-जातिकी रक्षा की थी—अपनी राजभक्तिका पूर्ण पुरस्कार मिला। हत्यारे डायर और माईकेल ओडायरने वहांपर ऐसे पिशाची काम कर दिखाये, जिनका विवरण पढ़कर रोमांच हो आता है। उन्होंने हजारों सती स्त्रियोंका सतीत्त्व हरण किया, हजारोंको विधवा बना दिया। भारतके ही नहीं, पृथ्वीमंडलके इतिहासमें पंजाबकी यह घटना अमर हो गई। क्योंकि निरस्त्र प्रजापर

गोलियां चलाना, हवाई जहाजसे बम बरसाना अंग्रेज बहादुरोंकी जैसी कृतज्ञ (?) जातिका ही काम है। जो-जो कष्ट पंजाबमें दिये गये हैं उन कष्टोंके स्मरणसे हृदय शतधारा विदीर्ण हो जाता है।

पंजाबकी यह आह भरी आवाज़ हमारे चरितनायक देश-बंधु न सुन सके और अपना सारा काम छोड़ पंजाबी भाइयों और बहिनोंके कष्टमें सम्मिलित होनेके लिए पंजाब जा पहुंचे। जिस समय आप पंजाब गये, उस समय आपको कलकत्तेमें लग-भग ५० हजार रुपये मासिककी आय थी। किन्तु इस आयकी तनिक भी परवाह न कर पंजाबके दंगेका पूरा पता लगानेके लिए जो आलइंडिया कांग्रेस कमेटीकी ओरसे कमीशन नियुक्त हुआ था, उसमें चार महीनेतक आप डटे रहे। इसके सिवा वहांके बहुतसे राजनीतिक मुकद्दमोंमें बिना फीस लिए आप पैरवी करते रहे। आपका यह स्वार्थत्याग केवल दिखानेके लिए था, सो बात नहीं है; वरं आपके हृदयमें करुणा उत्पन्न हुई थी। जिसका उदाहरण-स्वरूप स्त्रियोंके बयानमें आपका न जाने कितनी ही बार रोना है। स्त्रियोंने अपने बयानमें जब यह कहा था कि "एक दिन आठ वर्षसे ऊपरके सब पुरुषोंको बोसवर्थस्मिथने अपने बंगलेपर बुलाया। जब सबलोग बंगलेपर गये तब वह घोड़ेपर सवार हो गांवमें आया। साथमें उन स्त्रियोंको लौटाता आया जो बंगलेपर अपने-अपने पतियोंको भोजन लेकर जा रही थीं। गांवमें पहुंच उसने घरके भीतरसे जबर्दस्ती स्त्रियोंको बाहर निकाला; उनके मुंहपर थूका;.........में छड़ियां घुसेड़वायीं; अपने आगे हाथ

जुड़वाये, मुंहपरसे धोती हटायीं और यह कहा कि "जब तुमलोग अपने मर्दोंके पास लेटी थीं तो फिर उन्हें दंगा करनेसे क्यों नहीं रोका? अब तुम्हारे पाजामोंके नीचे...........पुलिस कांस्टेबिल देखेंगे।" इस बयानपर दासको मूर्च्छासी आ गयी। उन्होंने अपने एक व्याख्यानमें कहा भी था कि "हे भगवन् अपनी माताओं और बहिनोंपर ऐसा अत्याचार देखनेके लिए क्यों अबतक आपने जीवित रख छोड़ा है? भगवन्! मैं आपका कृतज्ञ होता यदि आप मुझे इस क्षणिक शरीरसे जुदा कर देते जिससे कि मैं यह भीषण अत्याचार अपनी बहिनोंके मुखसे न सुनता! मैं कृतज्ञ होता यदि इन अत्याचारोंका भी नाश हो जाता।"

वर्त्तमान समयमें देशका जीवन कृषिपर ही अवलम्बित है। बाणिज्य व्यवसायके अभावसे ही हमारी यह दशा हुई है, यह बात हम सब भलीभांति जानते हैं। हमारे यहांके प्रत्येक कृषकोंकी वार्षिक आय १५) से २०) तक है। २०) के बदले वार्षिक आय ३०) ही हो, तो क्या; इतनेसे किसी भी कृषककी साधारण आवश्यकताएं पूर्ण नहीं हो सकतीं। गवर्नमेंटको जेलखानेके प्रत्येक कैदीके लिए ४८) वार्षिक व्यय करना पड़ता है। इससे क्या हमारी घोर दरिद्रता प्रमाणित नहीं होती? भारतमें ऐसा कोई ग्राम नहीं है जहां पचहत्तर या अस्सी फी सदी ऋणी न हों। इसी प्रकार रोगियोंकी भी संख्या हो गयी है। ऐसी अवस्थामें देशका घोर दारिद्र्य दूर करना आवश्यक है। इसीपर देशबन्धुने एक बार अपना विचार प्रकट करते हुए कहा था कि:—"हमारा

सबसे पहला काम है सारे देशमें स्वास्थ्यकी पुनः स्थापना करना। क्योंकि रोगियोंके साथ हमारो दरिद्रताका घनिष्ठ सम्बन्ध है। हमें एक हाथसे तो देशके स्वास्थ्यकी रक्षा करनी होगी और एक हाथसे दरिद्रताको भगाना होगा। आर्थिक स्थिति सुधारनेके लिए कम सूद्पर रुपये उधार देनेके लिए गांव गांवमें छोटे छोटे बैंकोंकी स्थापना करनी होगी।"

देशबन्धुका स्वदेशभक्ति ही धर्म है, देशप्रेम ही उनका अर्थ है, मातृभूमिकी सेवा ही मोक्षसाधन है। इसीसे आप बंगालके ही नहीं समस्त भारतके प्रधान नेताओंमें गिने जाते हैं। आपने मैमनसिंहके भाषणमें कहा भी था—"देशसेवा ही हमारे धर्म-का प्रधान अंग है। हमारे जीवनका आदर्श भी देशसेवा ही है।"

सन् १९१८ ई० में जब कि आल इण्डिया कांग्रेस कमेटीकी ओरसे विलायतको प्रतिनिधि भेजनेका उद्योग हो रहा था,—तब देशबन्धुने उसके उपलक्ष्यमें कलकत्तेकी एक सर्वसाधारण सभामें कहा था—"इतने अल्प समयमें ही एक या दो वर्षके भीतर हम-लोगोंको जनसाधारणके सम्मुख दायित्वपूर्ण स्वायत्त्वशासन प्राप्त करनेकी विशेष आवश्यकता है, चाहे इसके लिए हमारा जीवन नष्ट ही क्यों न हो जाय। हमने गत तीस वर्षों की अभिग्यता-से यह अच्छी तरह समझ लिया कि यह स्वेच्छाचारी गवर्नमेण्ट हमलोगोंको इस प्रकार कुछ न देगी जबतक कि देशके शासन सम्बन्धी कार्य्यों में हमलोगोंका प्रकृत अधिकार रहेगा। गत तीस वर्षोंमें जब कभी भी शासन सुधारका प्रस्ताव उपस्थित हुआ तभी

ही नौकरशाहीने बाधा डाल सुधारका मार्ग छेंका। अतएव इस नौकरशाहीके समीप किसी प्रकारका भी राजनीतिक अधिकार पानेकी आशा वृथा है। हमलोगोंको नौकरशाहीके परिचालकोंके पास जाना होगा। ························हमें स्वायत्त्वशासन देनेके लिए उसके विरुद्ध यह कहकर आपत्ति की जाती है कि "अभी तुमलोगोंमें स्वायत्त शासनके उपयुक्त शिक्षाका अभाव है।" मैं कहता हूं कि यह किसका दोष है? १५० वर्षोंसे तुमने भारतमें राज्य करते हुए क्या किया? क्या इतने दिनोंमें तुम भारतको शिक्षित नहीं बना सके? क्या मैं यह नहीं जानता कि जापानने केवल ५० वर्षके भीतर इस प्रकारकी उन्नति कर ली? तुमने तो १५० वर्षतक राजत्व किया, फिर भी आज किस प्रकार ऐसी बात कहते हो कि तुमलोग स्वायत्त्वशासनके उपयुक्त नहीं?

राजा चाहे स्वदेशी हो अथवा विदेशी; देशबन्धु महाशयका कथन यह है कि प्रजा सानन्द रहे। प्रजा स्वायत्तशासनमें ही सुखी रह सकती है। इसीसे आपका कहना है कि—"हम नौकरशाहीका राज्य नहीं चाहते हम चाहते हैं स्वायत्त शासन। स्वायत्त शासनसे ही देशकी और लोककी भलाई है और देश तथा लोकके लिए ही स्थापित होगा—इससे प्रवल प्रतापान्वित शासनमें सारी प्रजाका अधिकार रहेगा।"

अब देशमें जो इस समय जोरोंसे असहयोग आंदोलन हो रहा है, उसमें देशबन्धुके विचार एवं कार्य्य कितने महत्वके हैं उसे देखिये—

असहयोग (Non-Co-operation) आंदोलन

इस आंदोलनमें हमारे चरितनायकने बहुत बड़ा कार्य्य कर दिखाया है, जिससे देशको आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। अतः इस आंदोलनका कुछ उल्लेखकर देना कदाचित असंगत न होगा। भारतीयोंके मनमें जो विजातीय राजाका विशेष भाव उदय हुआ वही इस आन्दोलनकी जड़ है इस विजातित्व भावके उदय होनेके मुख्य कारण यही हैं—१—पंजाबमें किये गये अत्याचारोंकी जांच करनेके लिए सरकारकी ओरसे हंटर कमेटी नियुक्त हुई। उसमें अधिकांश अंग्रेज और कुछ भारतीय सम्मिलित थे। इस कमेटीके अध्यक्ष थे लार्ड हंटर। कमेटीने[1] किस नीतिसे कार्य्य किया, इसका उल्लेख करना अनावश्यक हैं। हां यह बता देना जरूरी है कि हंटर कमेटीके देशी और विदेशी मेम्बरोंमें अंग्रेज मेम्बरोंके जातीय पक्षपातके कारण मत भेद हो गया था। फलतः भारतीयोंके किये हुए घावकी दवा करना तो दूर, उलटा हंटर कमेटीकी मेजारिटीने (बहुपक्ष) जो कि अंग्रेज मेम्बरोंकी लिखी हुई है—नमक छिड़कनेका काम किया। २—पंजाबमें अत्याचार करनेवाला डायर जैसा क्रूर और निर्दयी हत्यारा भारतसे बुलाकर दंड देनेको कौन कहे, हत्याके उपलक्ष्यमें पेन्शनर बनाया गया। यहां-तक कि विलायतमें पार्लमेण्टकी लार्ड सभाने डायरके अन्याय-पूर्ण कार्य्यका निर्लज्जतापूर्वक अनुमोदन किया और अंतमें उसके

१ यदि पंजाबकी घटनाओंका पूरा हाल जानकर ब्रटिश जातिकी स्वार्थ परायणता और जातीय पक्षपातका जीता जागता चित्र देखना हो, तो "पंजाबका हत्याकांड" जिसका मूल्य २) है अवश्य पढ़िये। —लेखक।

पुरस्कार स्वरूप विलायत और भारतमें अंग्रेजोंने पूर्ण परिश्रमसे प्रचुर धन संग्रह करके डायरको भेंट किया। ३—तुर्कीका अंग भंगकर भारतीय मुसमानोंपर धार्म्मिक आघात पहुंचाया गया।

बात यह है कि जब जर्मन महासमर जोरोंपर था, जब सुसंगठित जर्मन सेना विजय प्राप्त करती हुई फ्रांसके रणस्थलमें आगे बढ़ रही थी, जब अंग्रेजोंके सामने जीवन मरणका प्रश्न उपस्थित था, तब तुर्कोंने जर्मनीका साथ दिया था, इससे अंग्रेजोंके सामने बड़ा ही पेचीला प्रश्न उपस्थित हुआ; क्योंकि तुर्कीपर आक्रमण करनेके लिए मुसलमान सिपाहियोंसे काम लेना था, साथ ही भारतमें भी शांति रखनी थी। ऐसे अवसरपर प्रधान मंत्री मि० लायड जार्जने स्पष्ट शब्दोंमें कहा था कि "हम अपनी ही नहीं, संसारकी स्वाधीनताके लिए लड़ रहे हैं। युद्धका परिणाम चाहे जो हो पर तुर्क साम्राज्य युद्धके पहिले जिस रूपमें था युद्धके बाद भी उसी रूपमें रहेगा। बृटिश गवर्नमेंट अधीनस्थ भारतीय मुसलमानोंका दिल कभी भी न दुखायेगी।" लायड जार्जकी इसी बातपर विश्वास करके भारतीय मुसलमानोंने रूमके बादशाहके विरुद्ध अस्त्र ग्रहणकर सरकारकी सहर्ष सहायता की।

परन्तु युद्ध समाप्त होनेपर अंग्रेजोंने अपने वादेको तोड़ दिया। वास्तवमें नागपुरकी कांग्रेसमें पंजाब केशरी लाला लाजपतरायके भाषणमें कही हुई बातें अक्षरशः ठीक हैं कि—"मैं ललकारता हूं कि कोई भी यह बता दे कि बृटिश शासनमें कोई

ऐसे दश वर्ष बीते हैं जिनमें वादे नहीं तोड़े गये ? यहांतक कि शपथ करके भी उसका पालन यह नहीं करते। सम्राट और सम्राज्ञीके नामपर ग्रेट ब्रिटेनकी उत्तरदायी सरकारने वादे करके तोड़े हैं। यदि लार्ड सेलबोर्न यहां होते तो मैं उनसे पूछता कि मुझे आप यह बतावें कि ब्रिटिश कार्य्य कारिणी सभामें ऐसा कौन है जिसकी बात पंसारीसे अधिक महत्त्व-पूर्ण मानी जाती है।" अस्तु। अपना काम निकलते ही अंग्रेजोंने तुर्कीको कई हिस्सोंमें विभक्त कर मुसलमानोंके इस्लाम धर्मपर आघात पहुंचाया। यहांतक कि मि० लायड जार्ज यह भी माननेको तैयार नहीं कि उन्होंने वादा तोड़ दिया। वे तो कहा करते हैं कि मैंने अपनी की हुई प्रतिज्ञाओंका पूर्णरूपसे पालन किया—जब कि सारा संसार जानता है कि उन्होंने तुर्कीका अंगभंग करके मुसलमानोंके मजहबपर कुठाराघात किया है।

इन सब धोखेबाजियों और विश्वासघातोंके होनेसे महात्मा गांधीने और कोई मार्ग न देख स्पष्ट शब्दोंमें घोषणा की कि अत्याचार और अविचारके प्रतिवादका केवल एक ही मार्ग है; वह यह कि इस विधर्मी गवर्नमेंटसे : सब प्रकारका सहयोग छोड़ दें। देशमें इस बातकी बड़ी सनसनी फैली और सन् १९२० ई० के ता० ४ सितम्बरको कलकत्तेमें स्पेशल कांग्रेस देशपूज्य लाला लाजपतरायकी अध्यक्षतामें हुई और असहयोग प्रस्ताव निम्न प्रकार पास हुआ—पर देशके बड़े २ नेताओंमें मतभेद बना रहा :—

(१) पूर्ण स्वायत्व शासन (स्वराज्य) और असहयोग नीतिके सम्बन्धमें निर्वाचनाधिकारियोंको सुशिक्षित चुनना।

(२) राष्ट्रीय स्कूलों तथा कालेजोंकी स्थापना।

(३) पंचायतोंकी स्थापना।

(४) सरकारकी दी हुई उपाधियों और बिना वेतनकी नौकरियोंका छोड़ना।

(५) सरकारी सेनामें भारतवासियोंको रहनेसे रोकना।

(६) स्वदेशीका प्रचार करना।

(७) सरकारी नौकरी परित्याग करना।

(८) श्रमजीवियोंको ट्रेड युनियनके अंतर्भुक्त कर लेना।

(९) विदेशीय बैंकों और व्यवसायोंमें भारतीयोंका लगा हुआ धन धीरे धीरे हटा लेना और उसके भारतीय कार्य्यकर्ताओंको भी काम करनेसे मना करना।

(१०) आंदोलनको सफल और सार्थक करनेके लिए "तिलक स्वराज्य फण्ड" स्थापित करके धन संग्रह कर आवश्यकीय कार्य्यों में व्यय करना।

कलकत्तेकी इस स्पेशल कांग्रेसमें हमारे चरितनायक देशबन्धु दासने राष्ट्रीय विद्यालय और पंचायतोंकी स्थापनाके सम्बन्धमें आपत्ति की। फलतः असहयोगसे बंगाल प्रांत बिलकुल पीछे रहा और समस्त भारतमें जैसा कार्य्य होना चाहिये था नहीं हुआ। किन्तु चार मास बाद ही दिसम्बर सन् १९२० की नागपुर कांग्रेसके समय म० गांधीसे पूर्ण विवाद

करके असहयोगके पूर्ण प्रस्तावोंसे आप सहमत हो गये एवं कांग्रेसकी दूसरे दिनकी बैठकमें आपहीने असहयोग प्रस्ताव जनताके समक्ष उपस्थित किया। पहले सारे देशमें देशबन्धु महाशयके विपक्षी होनेके कारण बड़ी सनसनी फैली हुई थी, पर जिस समय दासने गद्गद् होकर कहा कि "जो कुछ मैं आज बोलूंगा वही मैं कल करूंगा भी। जीवनमें कहीं भी मेरे कहने और करनेमें आजतक अंतर नहीं हुआ है।" उस समय सबलोग निःशब्द होकर आपका भाषण सुनने लगे।

पश्चात् देशबन्धुने संक्षेपमें बड़े ही सुन्दर ढंगसे अपने विचारोंको प्रकट किया जोकि म० गांधीके असहयोग आंदोलनसे पूर्णरूपसे मिल गये। जनता चकित होगयी और देशबन्धुकी सराहना करते हुए, "धन्य हैं धन्य हैं" की आवाजसे पंडाल गूंज उठा।

नागपुर कांग्रेससे लौटनेपर आपने मातृभूमिकी दर्द भरी आवाज़ सुन अथाह धन दायिनी बैरिष्टरीको लात मार दी और भारतके कामनार्थ तन, मन और धन तीनों अर्पण कर बंगालका नेतृत्व शून्य सिंहासन ग्रहण किया। आज इतने बड़े प्रभावशाली असहयोग आंदोलनका जो भयंकर दृश्य दिखायी दे रहा है उसका श्रेय हमारे चरितनायकको किसी भी प्रधान नेतासे कम प्राप्त नहीं है। अब आप सर्वस्वत्यागी सन्यासी बनकर देशके कोने कोनेमें असहयोगकी आवाज निर्भीकता पूर्वक पहुंचा रहे हैं।

अवशेष बातें।

देशबन्धु चित्तरंजन दासका जीवन दो प्रवल शक्तियोंके प्रभावमें संगठित है। एक तो स्वामी विवेनन्दका सेवाधर्म, दूसरे वैष्णवीय प्रेमधर्म, ये दोनों प्रवल शक्तियां मिलकर ही आपके हृदयको इतना उच्च बना रखी हैं। सेवाधर्म और प्रेम-धर्म ही आपके जीवनके आदर्श हैं। राजनीतिक अधिकारको धर्मपालनकी श्रेष्ठ सीढ़ी समझकर ही आपने उसे ग्रहण किया है। जिस दिन आपने कांग्रेस (राष्ट्रीय महासभा) के आदेशा-नुसार त्यागधर्मका आश्रय ग्रहण किया था, उस दिन त्यागके विरुद्ध एक भाव आपके हृदयमें एकाएक उत्पन्न हुआ ; वह था दीन दुखियोंका भाव; कि किस प्रकार अब मैं इनकी सेवा कर सकूंगा। सर्वस्व त्याग करनेका संकल्प करने पश्चात् एक दिन एक कुटुम्बीने आपसे पूछा कि—"आपके असाधारण दानका अब क्या होगा, अनाथोंकी सेवा भी अब कैसे हो सकेगी?" दास महाशय कुछ देरतक स्तब्धसे हो गये फिर दीर्घसांस लेकर बोले—"इसकी अपेक्षा एक बड़े कर्त्तव्यका बुलाव हो रहा है। जिस प्रकार इतने दिनोंतक दयालु परमेश्वरने उनकी रक्षा किसी दूसरेको निमित्त करके की, उसी प्रकार वह सर्वदा करता रहेगा! उसकी लीला अपार है। जीवनके अंतिम समयमें मैं मातृभूमिकी कुछ सेवा करता हूं।"

वही त्यागकी ज्वलंत मूर्ति देशबन्धु चित्तरंजनने आज जिस प्रकार अपने जीवनको मातृभूमिकी उन्नति साधनामें उत्सर्ग कर दिया उसे सारा भारत भलीभांति जानता है। आपका वही आदर्श बंगालमें काम कर रहा है। जहां महात्मा गांधीके शब्द भी बंगालके छात्रोंको अपने बशमें न ला सके, तहां देशबन्धुके महान आदर्शने छात्रोंको विमुग्ध कर अपनी ओर खींच लिया।

देशबन्धुका प्रत्येक कार्य्य सराहनीय है। जिस दिन आपने काव्य ग्रंथकी रचना की, उस दिन आपके नवीन भावोंको देख देश-वासी धन्य हो गये; जिस दिन आप लाखों रुपये पैदा करके अनाथोंकी सेवामें व्यय करते थे, उस दिन बंगवासी उनको दानमें बलिसे तुलना करते थे; जब अलीपूरके बमवाले मुकद्दमेमें आपने महात्मा अरविन्दका पक्ष समर्थन कर उन्हें छुड़ा लिया, तब भारतीयोंने आपके गम्भीर कानून ज्ञानसे विस्मित हो "भारतका श्रेष्ठ कानूनज्ञाता" कह सम्बोधित किया। पश्चात् जब आपने अपनी सारी सम्पत्ति छोड़कर देशसेवामें अपनेको निमग्न कर दिया, तब सारा देश आश्चर्यान्वित हो 'महाप्राण' कहने लगा। थोड़े दिन हुए कलकत्ता विश्वविद्यालय कमीशनके सभापति सर माइकल सेडलरने एक पत्रमें लिखा था कि—"चितरंजनका अद्भुत त्याग जगतके इतिहासमें अतुलनीय हुआ; किसी भी देशमें किसी भी समय इतना धन पैदा करते हुए किसीने भी देशके लिए सर्वस्व त्याग नहीं किया। दासका अनुकरण करके भारतवासी मात्र धन्य होंगे।"

दो वर्ष पहले जिस समय देशबन्धु महाशय महाराज डुमरांवके मुकद्दमेमें बैरिष्टर थे उस समय एक सन्यासीने आपको लक्ष्य करके कहा था कि—"आप अपने इस ऐश्वर्य्य भोगको वर्ष डेढ़ वर्षके भीतर ही परित्याग कर सन्यास ग्रहण करेंगे।" सन्यासीकी बातें सुन लोग हंसने लगे, पर वह कथन आज अक्षरशः सत्य हुआ।

भारतीय हृदय सम्राट लोकमान्य भगवान बालगंगाधर तिलकने एक बार देशबन्धुदासके सम्बन्धमें कहा था कि—"हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि एक दिन ऐसा निश्चय आवेगा, जिस दिन कि देश गौरव चित्तरंजन अपनी सारी शक्ति स्वदेश सेवामें लगावेंगे, और उनको स्वदेशभक्ति ज्वलन्त-प्रदीप सदृश भारतवासियोंको राह दिखावेगी।" आज हमारे प्रातःस्मरणीय आराध्यदेव लोकमान्य तिलककी आशावाणी सफल हुई।

थोड़े दिन हुए जब कि आप असहयोगका प्रचार करनेके लिए चारों ओर भ्रमण करते हुए मैमनसिंह जा रहे थे, वहांके मैजिस्ट्रेटकी दुर्बुद्धिताने रोक दिया। देशमें खलबली मच गयी कि देखें दास महाशय आज्ञाकी अवहेलना करते हैं या नहीं। किन्तु कांग्रेसकी आज्ञा उस समय कानून तोड़नेकी नहीं थी इसलिए आप तुरंत वहांसे लौट आये। उस समय आपने देशवासियोंको जो शब्द सुनाया था, वह सारे देशमें प्रतिध्वनित हो उठा। आपने कहा कि—"हम लोगोंके साथ स्वयं अपने देशमें कृतदासके समान व्यवहार किया जा रहा है, बिना स्वराज्य प्राप्त

किये जीवन व्यर्थ है।" मैजिस्ट्रेटका देशबन्धुको रोकना देशके लिए बड़ा ही उपकारी हुआ। विद्यार्थियोंने परीक्षा देनेसे इनकार कर दिया, स्थानीय वकोल, मुख्तारोंने सात दिनके लिए कोर्ट जाना स्थगित कर दिया, कितने वकीलोंने हमेशाके लिए अदालत छोड़ दी। इसके अतिरिक्त कई राष्ट्रीय पाठशालाएं भी जगह जगह आपने स्थापित कीं। आपके इन कार्य्योंसे वहां बहुत बड़ी जागृति हो गयी।

पूर्व बंगाल भ्रमण करते हुए महाशय देशबन्धु बैरीसालकी प्रादेशिक सभामें उपस्थित हुए। वहांपर आपने अपने भाषणमें बतलाया कि—'स्वराज्य दशके कहनेसे प्राप्त होगा या एकके कहनेसे प्राप्त होगा, समझमें नहीं आता। इतना जरूर है कि स्वराज्य ईश्वर-प्रदत्त हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। जिस दिन हममें आत्मबल आ जायेगा, जिस दिन हमारे अंतःकरणमें स्वतंत्रताका सूर्य्य उदय हो जायगा—उसी दिन, उसी क्षण हम भीतर और बाहर दोनोंसे पराधीनताकी बेड़ीसे मुक्त हो जायंगे। शिक्षा, वाणिज्य, विचार और शासनमें अभी हमें दूसरोंका मुंह जोहना पड़ता है, यही तो मांका दुःख है। हमलोगोंको समझना चाहिये कि संसारमें हमारा कोई भी शत्रु नहीं, पर हमें मुक्ति चाहिये। यह आंदोलन शांतिका युद्ध है; हमलोग अपनी माताओंको विदेशी वस्त्र पहिनाएं, यह क्या लज्जा रखनेका काम है?

एकबार जब कि राष्ट्रीय शिक्षाका आंदोलन प्रारम्भ हुआ तब सर आसुतोष मुखर्जीने यह कहा कि यदि मुझे एक करोड़ रुपये

मिल जायं तो मैं कलकत्ता महाविद्यालय गवर्नमेंटके हाथसे निकाल लूं। मुखर्जी महाशयके इस बातकी सनसनी देशमें बड़े जोरोंसे फैली, पर किसीका साहस न हुआ कि इतनी बड़ी रकम संग्रह करनेका साहस कर उन्हें उत्तर दे। यह हाल हमारे चरित-नायकको भी मिला। आपने प्रसन्नता पूर्वक कहा कि यदि सर आसुतोष मुखर्जी महाशय इस बातका मुझे वचन दें तो मैं उन्हें एक करोड़ रुपये देनेके लिए तैयार हूं। किन्तु यह बात केवल देशके आर्थिक शक्तिका परिचय लेनेके लिए ही कही गयी थी, इसलिए मुखर्जी महाशयने फिर कोई संतोष-जनक उत्तर देनेकी कृपा नहीं की।

वर्त्तमान आंदोलनके प्रारम्भ होनेके कारण शताब्दोंसे बिछुड़ी हिन्दू मुसलमान जाति एकताके सूत्रमें बँध गयी। इस ऐक्यका श्रेय हमारे चरित-नायकको किसीसे कम नहीं है। खिलाफतके सम्बन्धमें देशबन्धुके भावोंका पता उनकी उस वक्तृतासे चल जाता है जो कि उन्होंने आसामकी प्रादेशिक खिलाफत कानफरेंस में दी थी। इस भाषणसे प्रायः सभी हिन्दू नेताओंके खिलाफत सम्बन्धी भावोंका पता लग जाता है। भाषण इस प्रकार है:—

"जो महा मिलनके सागरसंगमसे भारत इतिहासकी विभिन्न स्रोत धारा छूटकर चली है आज भी हमलोगोंका वह मिलन पूर्ण नहीं हुआ। सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेपर हमें इस बातका किंचत् आभास मिल सकता है कि विधाताके अलक्ष्य इङ्गित (इशारे) के वशीभूत हो भारतीय महाजाति संसारके किस आवश्यकताको

सिद्धिके लिए उठी है। सभ्यताके इतिहासमें शैशव कालसे लेकर आजतक भारतमें जितनी घटनाएं घटित हो चुकी हैं वे सब भारतको एकीभूत करनेमें सहायक हुई हैं। जो पुष्पमाला गुंथन करके हमें अपने जातीय जीवनके देवताको समर्पण करनी होगी उसके प्रति आज भी पुष्प (फूल) एकत्र नहीं हुआ। एक एक करके शताब्दके ऊपर शताब्द रखनेसे वह कुसुमराशि (पुष्पराशि) संगृहीत हो रहा है। कहा नहीं जा सकता कि कब हमलोगोंके पूर्ण मिलनकी ग्रथित मालाको ग्रहणकर विधाता हमारे जीवनको सार्थक करेंगे। उस मिलन ऊषाके पक्षी बोल रहे हैं। कितने विचित्र स्वरके मध्य उस मिलन संगीतकी मधुर-ध्वनि आज कानमें प्रवेश कर मर्मस्पर्श कर रही है! आज सब वैचित्र्यको सार्थक कर एक की अखंड मूर्त्ति भास रही है।

इस भारत भूमिमें कितने राजा और कितनी ही राजधानियां हो चुकीं एवं ध्वंस हो गयीं; और विदेशकी असंख्य जातियां इस भारतमें आचु कीं। आर्य्य, अनार्य्य, शक, ग्रीक, हूण, पार्सी, यहूदी, क्रिस्तान और मुसलमान ये सभी भारतमें स्थान प्राप्त करके स्नेह धन्य हो चुके।

हरएक जातिके पृथक् पृथक् धार्मिक भाव हैं; मनुष्यके साथमें मनुष्यका भेदाभेद भासित हो वह पुण्यस्रोत भारतको एकताकी ओर अग्रसर कर रहा है। अनार्य्योंके सहित आर्य्योंके संयोगसे एक वृहत्तर जातिकी उत्पत्ति हुई; पश्चात् एक एक करके बहुतसी जातियोंने आकर भारतमें प्रवेश किया। भारतके पास

जो कुछ देनेको था, वह सब दान कर तथा जातीय जीवन नष्ट करके अपना प्रयोजन सार्थक किया। ब्राह्मण धर्म, बौद्ध व जैन-धर्म, मुसलमान और अन्यान्य धर्म—सभी भारतको एक वृहत्तर जीवन लाभ करनेमें सहायक हुए हैं। यह जीवन किसीको भी नष्ट करके प्रस्फुटित नहीं हुआ है—प्रत्येकके वैचित्र्यको बचाकर, यथास्थान उसे स्थापित करके, सबके समावेशसे एक नवीन सौंदर्य्य खिल उठा है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि जिस बाणीको सुनकर जिस मंत्रके उदान्त स्वरसे संसारको विमुग्ध करके भारतका जातीय जीवन सार्थकता लाभ करेगा, जिसके लिए इतने दिनोंतक भारत कितने ही विप्लवोंको सहन करता हुआ प्रस्तुत हो रहा था,—आज उस शुभ दिनका प्रभाती गान आरम्भ हो गया।

"स्मशानके कुत्तोंका भूंकना" चारों ओर सुनायी पड़ रहा है; शांतिकी बाणी, प्रेमकी बाणी इस भयावह शब्दके बीचमें न जाने कहां प्रच्छन्न हो गयी हैं। कलहके निष्पेषणसे मनुष्यका प्राण आज कर्मकी यातनासे आर्त्तनाद कर रहा है। प्रलयकी वेदनासे पृथ्वी आज अधीर हो उठी है। इस मरण कोलाहलके भीतर कौन आज मंगलमय शंखध्वनि करके मानव स्वाधीनताके नवीन युगका सम्बोधन करेगा? वह साधना संसारमें और किस जातिकी है? जान पड़ता है कि भारतकी इतने दिनोंकी प्रतीक्षा आज फलोन्मुख हो गई है।

वर्त्तमान आंदोलन उस उद्बोधनके पहले हमारा पवित्री करण

है। युग युगांतरकी संचित आवर्ज्जनाराशि आज दूर फेंक देनी पड़ेगी। अपने मनकी मैल निकालकर आराध्य देवका पूर्ण रूपसे दर्शन करना होगा। तभी हमलोग नये बलको प्राप्त कर—मुक्तिके महा मंत्रकी घोषणा करके संसारमें नूतन जीवन संचार करनेमें समर्थ होंगे।

आज हमलोगोंको मनसा, वाचा, कर्मणामें शुद्ध होना होगा। भेदाभेद, हिंसाद्वेषको भूलकर मिलनके सूत्रमें आबद्ध होना पड़ेगा। वही आज माताके नामसे प्रेमकी ज्वार देशमें भासित होकर छूट चली है। यह जल तरंग रोकनेकी शक्ति संसार भरमें नहीं।

हिन्दुओंके साथ मुसलमानोंका जातीय विरोध मुसलमानी राज्यमें नहीं था। टोडरमल, बीरबल, यशवंतसिंह, मानसिंह आदि हिन्दू मुसलमान राजाओंके दाहिने हाथ थे। इस समय भी हैदराबादमें, जहां कि हिन्दू प्रजा विशेष है—मुसलमान राजा है; काश्मीरमें, जहां मुसलमान प्रजा अधिक है—हिन्दू राजा है; किन्तु वहां हिन्दू मुसलमानमें वैमनस्य नहीं है। विरोधकी सृष्टि इस ब्रिटिश शासनमें ही है। पर आज भारत माताकी दोनों संतानें (हिन्दू और मुसलमान) समझ गयी हैं कि दोनोंका स्वार्थ एक है—विदेशीका स्वार्थ दोनोंको विभिन्न रखनेमें है।

यही कारण है कि मुसलमानोंके धर्म्मपर आघात पहुंचनेसे आज हिन्दुओंको मानसिक क्लेश हो रहा है। मुसलमानोंके समान हिन्दुओंके लिए भी यह धर्मकथा है। हिन्दुओंकाप्रकृत

धर्म यही है कि किसी भी धर्म पीड़ितको पीड़ा देनेवालोंके हाथसे छुड़ानेका प्रयत्न करना। संसारके किसी भी धर्म्मानुयायीका यही धर्म होना चाहिये। प्रकृत धर्म विश्वास मनुष्यके योग स्थापनमें सहायता कर किसी भी धर्मको नष्ट करनेसे नष्टकर्त्ता धर्मको कुछ लाभ नहीं। भगवान किस तरह संसारमें कितनी लीलाएं दिखाते हैं—कितने धर्म्मों और कितने भावोंके द्वारा अपनी दिव्यमूर्त्ति प्रकट करते हैं,—मनुष्य क्या उसे कभी जान सकता है? वह तो केवल उसकी अपार लीलाके वशीभूत होकर चलता है।

जो भाव एक मनुष्यका है वह दूसरेका नहीं है; किन्तु इस वैचित्र्यका नाम विरोध नहीं। सभोंका सामंजस्य ही सत्य शिवकी सुन्दर स्थापना है। जबतक परस्परमें एक दूसरेको श्रद्धाके भावसे नहीं देखेंगे तबतक मानव-समाजमें परमात्माकी इस अपूर्व लीलाकी कुछ भो उपलब्धि न होगी। इसीसे हमें पारस्परिक प्रेमकी आवश्यकता है; इस प्रेमके अभावसे ही इस प्रकारके विरोधकी सृष्टि हुई है।

प्रकृत धार्मिकोंके समीप यह विरोध नहीं—उनका विरोध अधर्मके साथ होता है। मौलाना मुहम्मद अलीसे एक उच्च पदस्थ राजकर्म्मचारीने पूछा था कि—"क्या हिन्दू मुसलमानोंका मेल सत्य होगा? दोनों धर्म्मोंके सम्मिश्रणसे जबतक एक तीसरा धर्म न बन जाय तबतक क्या यह मेल टिक सकता है?" मौलाना साहबने उत्तर दिया—"हमारा यह आंदोलन अधर्म, अत्याचार

और अन्यायके विरुद्ध है—यहांपर एक ओर तो धर्म है और दूसरी ओर अधर्मियोंका दल—युद्ध इन्हीं दो दलोंमें है, हिन्दू मुसलमान और ईसाईका कोई प्रश्न नहीं है। इसीलिए खिलाफतके युद्धमें हिन्दुओंने अपना कर्त्तव्य समझकर योगदान किया है। जो लोग इसे राजनीतिक चाल कहें, वे मिथ्यावादी हैं। मनुष्यके साथ मनुष्यका सम्बन्ध राजनीतिक चालपर स्थापित नहीं होता। वह प्राणका विषय है, प्राणकी अनुभूति प्रकृतधर्म्म विश्वासके हुए बिना कभी नहीं होती।" बहुतसे लोग कहते हैं कि खिलाफतका प्रश्न हल हो जानेपर मुसलमान लोग इस आंदोलनको छोड़ देंगे। पर मुझे इसपर जरा भी निश्चय नहीं होता। मुसलमान लोग निश्चय ही इस बातको जानते हैं कि बिना स्वराज्य प्राप्त किये अंग्रेज लोग हमें इस प्रकारका कष्ट देते रहेंगे। स्वराज्य प्राप्त न होनेहीसे अंग्रेजोंने भारतके आठ करोड़ मुसलमानोंपर इस प्रकारका आघात करनेका साहस किया है।

आज यदि खिलाफतका प्रश्न हल होजाय—हम यदि कुछ पा जायं तो भी वह पाना-सार्थक नहीं होगा। अनुग्रहसे दिया हुआ आजका दान फिर कल ही छीन लिया जा सकता है। हम अपना अधिकार अपनी प्राप्य योग्यताद्वारा अर्जन (प्राप्त) कर लेना चाहते हैं और वही पाना हमारा स्थायी पाना होगा।

भिक्षूकेर कबे बोलो सूख,
कृपा पात्र हाये किवा फल ?

भीख मांगनेसे हमारी मनोवांछा कभी पूर्ण न होगी। याचक बनकर सम्मान प्राप्त करनेमें कोई लाभ नहीं। यदि हम अपने घरमें ही अपनी आत्म प्रतिष्ठा नहीं बचा सकते, यदि अपने देशमें ही हमें पशुवत् रहना होगा तो फिर हमारा मान और धर्म कहां रहा? हमें खानेको अन्न नहीं मिलता, लज्जा निवारण करनेके लिए वस्त्र भी नहीं मिलता, हमारे स्त्री बच्चोंको पद पदपर लांछना भोग करना होता है— हमारे देशवासियोंको कीट पतंगके समान प्राण देना पड़ता है, हमारे धर्मकी इज्जत कहां रही? इसलिए चाहिये हमें स्वराज्य।

वीरोंकी भांति हमको वह स्वराज्य अर्जन (प्राप्त) करना होगा; मनुष्योंकी भांति उस स्वराजका भोग हमें करना होगा। उसमें मुसलमान और हिन्दू दोनों अपने अपने धर्म कर्मके साधन करके शांति, प्रेम, सुख और सम्मान पूर्वक रह सकेंगे। उसमें हिन्दू और मुसलमानकी कोई बात नहीं है—बात है मानव समाजकी और धर्मकी। इसलिए इसमें न बिरोध है और न असामञ्जस्य है।

मनुष्यमात्रके लिए स्वराज्य प्राप्त करना आवश्यक है। स्वाधीनता प्राप्त किये बिना हमारे जातीय जीवनका उद्देश्य कदापि सिद्ध नहीं हो सकता। आगे अपने उद्धारकी जरूरत है, उद्धार लाभ किये बिना हम संसारको क्या कहके अपनी वाणी सुनावेंगे? इसलिए हमारे उद्धारमें संसारका भी प्रयोजन है।

हिन्दू मुसलमान सबको एक होकर महाबोधनका पुजारी

और अन्यायके विरुद्ध है—यहांपर एक ओर तो धर्म है और दूसरी ओर अधर्मियोंका दल—युद्ध इन्हीं दो दलोंमें है, हिन्दू मुसलमान और ईसाईका कोई प्रश्न नहीं है। इसीलिए खिला-फतके युद्धमें हिन्दुओंने अपना कर्त्तव्य समझकर योगदान किया है। जो लोग इसे राजनीतिक चाल कहें, वे मिथ्यावादी हैं। मनुष्यके साथ मनुष्यका सम्बन्ध राजनीतिक चालपर स्थापित नहीं होता। वह प्राणका विषय है, प्राणकी अनुभूति प्रकृतधर्म्म विश्वासके हुए बिना कभी नहीं होती।" बहुतसे लोग कहते हैं कि खिलाफतका प्रश्न हल हो जानेपर मुसलमान लोग इस आंदो-लनको छोड़ देंगे। पर मुझे इसपर जरा भी निश्चय नहीं होता। मुसलमान लोग निश्चय ही इस बातको जानते हैं कि बिना स्वराज्य प्राप्त किये अंग्रेज लोग हमें इस प्रकारका कष्ट देते रहेंगे। स्वराज्य प्राप्त न होनेहीसे अंग्रेजोंने भारतके आठ करोड़ मुसलमानोंपर इस प्रकारका आघात करनेका साहस किया है।

आज यदि खिलाफतका प्रश्न हल होजाय—हम यदि कुछ पा जायं तो भी वह पाना-सार्थक नहीं होगा। अनुग्रहसे दिया हुआ आजका दान फिर कल ही छीन लिया जा सकता है। हम अपना अधिकार अपनी प्राप्य योग्यताद्वारा अर्जन (प्राप्त) कर लेना चाहते हैं और वही पाना हमारा स्थायी पाना होगा।

भिक्षुकेर कबे बोलो सुख,
कृपा पात्र हाये किवा फल ?

भीख मांगनेसे हमारी मनोवांछा कभी पूर्ण न होगी। याचक बनकर सम्मान प्राप्त करनेमें कोई लाभ नहीं। यदि हम अपने घरमें ही अपनी आत्म प्रतिष्ठा नहीं बचा सकते, यदि अपने देशमें ही हमें पशुवत् रहना होगा तो फिर हमारा मान और धर्म कहां रहा? हमें खानेको अन्न नहीं मिलता, लज्जा निवारण करनेके लिए वस्त्र भी नहीं मिलता, हमारे स्त्री बच्चोंको पद पदपर लांछना भोग करना होता है— हमारे देशवासियोंको कीट पतंगके समान प्राण देना पड़ता है, हमारे धर्मकी इज्जत कहां रही? इसलिए चाहिये हमें स्वराज्य।

वीरोंकी भांति हमको वह स्वराज्य अर्जन (प्राप्त) करना होगा; मनुष्योंकी भांति उस स्वराजका भोग हमें करना होगा। उसमें मुसलमान और हिन्दू दोनों अपने अपने धर्म कर्मके साधन करके शांति, प्रेम, सुख और सम्मान पूर्वक रह सकेंगे। उसमें हिन्दू और मुसलमानकी कोई बात नहीं है—बात है मानव समाजकी और धर्मकी। इसलिए इसमें न बिरोध है और न असामञ्जस्य है।

मनुष्यमात्रके लिए स्वराज्य प्राप्त करना आवश्यक है। स्वाधीनता प्राप्त किये बिना हमारे जातीय जीवनका उद्देश्य कदापि सिद्ध नहीं हो सकता। आगे अपने उद्धारकी जरूरत है, उद्धार लाभ किये बिना हम संसारको क्या कहके अपनी वाणी सुनावेंगे? इसलिए हमारे उद्धारमें संसारका भी प्रयोजन है।

हिन्दू मुसलमान सबको एक होकर महाबोधनका पुजारी

होना पड़ेगा। तुच्छ स्वार्थकी बलि देकर अपने धर्मकी रक्षाके लिए आत्मबल संग्रह करना होगा। वर्त्तमान आन्दोलन उसी आत्मबलके संग्रह करनेका आयोजन मात्र है। इस आयोजनमें सारी बुराइयोंको दूर कर देना होगा—नवजीवनके स्निग्ध ऊषामें विधाताका आशीर्वाद शिरोधार्य्यकर गहन मार्गकी यात्रा करके मृत्युको जीतना होगा।"

अब पाठकोंको यह बात ज्ञात हो गयी होगी कि देशबन्धुका इस वर्त्तमान आंदोलनमें कितना बड़ा भाग है। महाशय देशबन्धु-के लिए इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि इस समय आप म० गांधीके दाहिने हाथ हैं। बंगालमें राजनीतिक जागृति अधिक बढ़ानेके लिए आपने अभी हालहीमें एक "बांगलार कथा" नामका साप्ताहिक पत्र भी निकाला है जिसके दो एक लेखोंके अनुवाद हम देंगे ताकि पाठकोंको ज्ञात होजाय कि यह पत्र कैसी जागृति करेगा और देशबन्धु दासकी आंदोलन बढ़ानेमें कैसी सूझ है।

सर्वस्वत्यागी देशबन्धु चित्तरंजनदासका अबतकका संक्षिप्त जीवन बृत्तान्त शेष हुआ। दयालु परमात्मा हमारे चरितनायक देशबन्धु चित्तरञ्जनदासको दीर्घकालतक जीवित रखे। सारा भारतवर्ष आपके किये कार्य्यों के लिए जन्म जन्मान्तर आभारी रहेगा। देशवासियोंकी आपपर कितनी श्रद्धा और भक्ति है, वह केवल इसीसे ज्ञात होता है कि आगामी दिसम्बर सन् १९२१ ई० में अहमदाबादमें होनेवाली कांग्रेसके सभापतिका आसन

सुशोभित करनेके लिए जनताने देशबन्धुकोही मनोनीत किया है। यह कांग्रेस कितने महत्वकी होगी, यह सारा देश जानता है।

ऐसी नाजुक स्थितिमें देश अपनी बागडोर दास महाशयको सुपुर्द कर रहा है परमात्मा उसकी रक्षा करें, बस यही हृदयकी अभिलाषा है।

परिशिष्ट

वस्त्र-यज्ञ

"बांगलार कथा" के एक लेखका अविकल अनुवाद।

महात्मा गांधी और कांग्रेसकी आज्ञा है—विदेशी वस्त्र त्याग दो। हमारे कितने ही शिक्षित भाइयोंका कहना है कि ध्वंस मत करो, जलाओ मत खुलना भेज दो; दुर्भिक्ष-प्रपीड़ित हमारे जो भाई हैं उनके पास भेज दो। कुछ कहनेके समय दूसरेका उपकार करनेका भाव हृदयमें उत्पन्न होता है। आज आपलोगोंको अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि क्यों विदेशी वस्त्र ध्वंस करनेको कहा जा रहा है। विदेशी वस्त्रका अर्थ क्या है? इसका मतलब क्या है समझते हो? यह सब हमारे दासत्वका निदर्शन है। जिस व्याधिमें हम ग्रस्त हैं उस व्याधिका निदर्शन है, हमारे अपमान, हमारी धर्महीनता तथा हमारी गुलामोका निदर्शन है।

आज प्रायः तीस वर्षसे अधिक हुआ जब कि मैं विलायतमें शिक्षा प्राप्त करने गया था, उस समय Herodotus (हेरोडोटस) की एक बात पढ़ो थी, वह यह है—"India seems to be a wonderful country. It drains the wealth of the world but gives nothing in return.

अर्थात् भारतवर्षने पृथ्वीका धन ढोकर रख लिया है किन्तु कुछ देता नहीं। कहा है भारत एक आश्चर्य्य देश है।" मैं कई दिनोंतक इस बातका अर्थ न समझ सका, आज प्रायः दश वर्ष हुए होंगे इसका अर्थ एक दिन एक मुहूर्त्तमें मेरी समझमें आगया। और यह बात सन् १९१६ ई० में जबकि मैं प्रादेशिक समितिका सभापति नियुक्त किया गया था, कहा था कि, क्यों भारतवर्ष ले सकता है दे नहीं सकता। आहार परिधेय वस्त्र इस दरिद्र जातिका प्रधान कर्म है। हमारी यह रीति थी कि हम भोजन और वस्त्रके लिए किसीके आगे हाथ नहीं पसारते थे। अपने घरका धान अपने खेतमें पैदा होता था, अपना कपड़ा अपने घरमें तैयार होता था। जिस समय आप कुछ नहीं करते केवल आलस्यमें समय व्यतीत करते हैं उस समय आप चरखा चलावें-दिनमें आधा घंटा एक घंटा जिससे जितना हो सके। संसारमें एक परिवारमें चार पांच आदमी रहते हैं, सब अवसर पाकर चरखा चलावें। वर्षके अन्तमें जो सूत तैयार होगा उसका मूल्य नहीं है। पश्चात् आपके घरमें यदि ताँत हो तो उससे अन्यथा ताँतीके घरमें बुनवा लें; इसी प्रकार यदि घरमें रुई न हो तो खरीद लें। किन्तु इस वर्षमें जिस प्रकार रुईकी खेती आरम्भ हुई है इसी प्रकार यदि होती रही तो दो वर्षके भीतर प्रत्येक गृहस्थके घरमें रुईके गाछ दिखायी पड़ेंगे। यह सब मिथ्या बातें नहीं हैं प्रत्येक गृहस्थके घरमें पहले रुईके गाछ थे। मैंने जिस समय इस बातको समझा उस समय घरमें रुईके पेड़ तैयार किये थे, वह उत्कृष्ट रुई है, उस रुईसे ढाकेकी

मस्लिन तैयार होती है। ढाकेकी मस्लिन मैं नहीं देख पाता हूं। प्रायः पांच सात वर्ष पहले थी। इस तरहकी चीज़ संसारमें कहीं नहीं होती। लोग कहते हैं कि चरखेसे वैसा सूत तैयार नहीं हो सकता; मैं कहूंगा कि वे उस इतिहासको नहीं जानते और न जाननेकी चेष्टा ही करते हैं। चरखेके सूतसे और देशके गाछोंकी रुईसे ही ढाकेकी मस्लिन तैयार होती थी जिसे रूमके सम्राट बड़े ही कष्टसे बहुत रुपये खर्च करके मंगाते थे। हम अपनी आवश्यक चीजें अपने घरमें तैयार करते थे इसलिए हमें किसी चीज़की कभी तंगी नहीं होती थी। "खेतेर धान, पुकुरेर माछ, घरे गोरूर दूध" हमें और चाहिये ही क्या? मैं आज भी कहता हूं, और सब चूल्हेमें जाय हमें तो भोजन वस्त्रसे काम है। यदि यह मिलने लगे तो फिर हमें और चाहिये ही क्या?

हमारा जो शिल्प, जगत्के आदरकी वस्तु था उसे हमने खो दिया। यह सब जो शौकीन शिल्प जिसके बिना जीवनयात्रा निर्वाह की जाती—हम विदेश भेज देते और विदेशसे धन खींच लाते। शिल्प अमूल्य है, मैं पांच हजार रुपये देकर चित्र खरीदूंगा, किन्तु चित्रका वास्तविक मूल्य पांच हजार रुपये नहीं हैं। इसीसे हेरोडोटसने उस समय कहा था कि भारतवर्ष पृथ्वीका धन ढोकर लेजाता है किन्तु कुछ देता नहीं। आज पृथ्वी भारतवर्षके धनको खींचे जा रही है। क्यों? इसलिए कि हमने मनुष्यत्वको खो दिया; हमारी शिक्षा

हमारा जीवन नष्ट होगया है। इसीलिए यह स्वराज्य आंदोलन मचा है।

आज हमारे इस नयेयुगके आरम्भमें भारतवर्षके इतिहासमें इस नवीन अध्यायकी सूचनामें स्वदेशी ग्रहण करो। एकवार "जय मा" बोलकर प्रतिज्ञा करो कि किसी तरहका भी विदेशी वस्त्र नहीं लेंगे। अभी तो यूरोपके युद्धके समय कपड़ा इतना कम होगया था कि खरीद नहीं सकते थे; मैं क्या नहीं जानता कि अनेक ज़िलोंमें स्त्रियां केलेके पत्तेसे लज्जा निवारणकर मकानका दरवाजा बन्दकर बैठी रहती थीं? इसलिए तुम अपना काम क्या अब भी नहीं चला सकोगे? एक कपड़ेके दो टुकड़े कर दो और दोनोंको अलग अलग पहनो। लज्जा!—देहकी लज्जा? मैं पूछता हूं, कौन लज्जा अधिक? देहकी या प्राणकी? आज नव-युगके आरम्भमें यदि मैंचेस्टरके कपड़े पहनकर खूब बाबूगीरी ठाटसे सड़कपर चलोगे तो दुनियाके लोग तुन्हें क्या कहेंगे? रुष्ट न होना भाई, क्षमा करना। लोग समझेंगे कि अंग्रेज अच्छी तरह खिलाते और पहिनाते हैं, और गलेमें घंटा (?) देकर रखते हैं। यही दुनिया समझेगी। अपनी इज्जतरक्षा करनी होगी, अपने घरमें कपड़ा बुनना होगा—इसमें बाबूगीरी रहे चाहे न रहे। भाई बहिनोंका करुण—स्नेह इस कपड़ेके सूत सूतमें मिला हुआ है। इसीसे कहता हूं भाई अपनी रक्षा करनी होगी; स्वदेशमंत्र जपना होगा, और मनुष्य कहकर संसारको अपना परिचय देना होगा।

मस्लिन तैयार होती है। ढाकेकी मस्लिन मैं नहीं देख पाता हूं। प्रायः पांच सात वर्ष पहले थी। इस तरहकी चीज़ संसारमें कहीं नहीं होती। लोग कहते हैं कि चरखेसे वैसा सूत तैयार नहीं हो सकता; मैं कहूंगा कि वे उस इतिहासको नहीं जानते और न जाननेकी चेष्टा ही करते हैं। चरखेके सूतसे और देशके गाछोंकी रुईसे ही ढाकेकी मस्लिन तैयार होती थी जिसे रूमके सम्राट बड़े ही कष्टसे बहुत रुपये खर्च करके मंगाते थे। हम अपनी आवश्यक चीजें अपने घरमें तैयार करते थे इसलिए हमें किसी चीज़की कभी तंगी नहीं होती थी। "खेतेर धान, पुकुरेर माछ, घरे गोरूर दूध" हमें और चाहिये ही क्या? मैं आज भी कहता हूं, और सब चूल्हेमें जाय हमें तो भोजन वस्त्रसे काम है। यदि यह मिलने लगे तो फिर हमें और चाहिये ही क्या?

हमारा जो शिल्प, जगत्के आदरकी वस्तु था उसे हमने खो दिया। यह सब जो शौकीन शिल्प जिसके बिना जीवनयात्रा निर्वाह की जाती—हम विदेश भेज देते और विदेश-से धन खींच लाते। शिल्प अमूल्य है, मैं पांच हजार रुपये देकर चित्र खरीदूंगा, किन्तु चित्रका वास्तविक मूल्य पांच हजार रुपये नहीं हैं। इसीसे हेरोडोटसने उस समय कहा था कि भारतवर्ष पृथ्वीका धन ढोकर लेजाता है किन्तु कुछ देता नहीं। आज पृथ्वी भारतवर्षके धनको खींचे जा रही है। क्यों? इसलिए कि हमने मनुष्यत्वको खो दिया; हमारी शिक्षा

हमारा जीवन नष्ट होगया है। इसीलिए यह स्वराज्य आंदोलन मचा है।

आज हमारे इस नयेयुगके आरम्भमें भारतवर्षके इतिहासमें इस नवीन अध्यायकी सूचनामें स्वदेशी ग्रहण करो। एकवार "जय मा" बोलकर प्रतिज्ञा करो कि किसी तरहका भी विदेशी वस्त्र नहीं लेंगे। अभी तो यूरोपके युद्धके समय कपड़ा इतना कम होगया था कि खरीद नहीं सकते थे; मैं क्या नहीं जानता कि अनेक ज़िलोंमें स्त्रियां केलेके पत्तेसे लज्जा निवारणकर मकानका दरवाजा बन्दकर बैठी रहती थीं? इसलिए तुम अपना काम क्या अब भी नहीं चला सकोगे? एक कपड़ेके दो टुकड़े कर दो और दोनोंको अलग अलग पहनो। लज्जा!—देहकी लज्जा? मैं पूछता हूं, कौन लज्जा अधिक? देहकी या प्राणकी? आज नव-युगके आरम्भमें यदि मैंचेस्टरके कपड़े पहनकर खूब बाबूगीरी ठाटसे सड़कपर चलोगे तो दुनियाके लोग तुम्हें क्या कहेंगे? रुष्ट न होना भाई, क्षमा करना। लोग समझेंगे कि अंग्रेज अच्छी तरह खिलाते और पहिनाते हैं, और गलेमें घंटा (?) देकर रखते हैं। यही दुनिया समझेगी। अपनी इज्जतरक्षा करनी होगी, अपने घरमें कपड़ा बुनना होगा—इसमें बाबूगीरी रहे चाहे न रहे। भाई बहिनोंका करुण—स्नेह इस कपड़ेके सूत सूतमें मिला हुआ है। इसीसे कहता हूं भाई अपनी रक्षा करनी होगी; स्वदेशमंत्र जपना होगा, और मनुष्य कहकर संसारको अपना परिचय देना होगा।

भारतका इतिहास क्या तुम्हारे हाथमें है ? विधाताकी लीलाको क्या तुम बदल सकते हो ? तुम आत्महत्या करोगे, यह क्या तुम्हारे लिए साध्य है ? तुम्हारा मन तुम्हें खींच लावेगा। इसीसे मैं तुम्हें अंतिमबार कहता हूं कि तुम जगतके मैदानमें उतर पड़ो। चाहिये तुम्हारा प्राण, चाहिये उस प्राणका स्पर्श, चाहिये उस प्राणको अग्नि दाह, चाहिये भगवान, चाहिये लीला !

श्री हट्ट (सिलहट) के टाउनहालमें देशबन्धु चित्तरंजनदासकी वक्तृता।

पहली बात जो मेरे मनमें उत्पन्न हुई है, वह यह है कि आज आपलोगोंने इस श्रीहट्टनगरमें किस लिए मुझे बुलाया है, किसके लिए इतना कष्ट करके मेरे आनेके निमित्त इतना आयोजन किया है? इस प्रकार आह्वान करनेके पहिले आपलोग अपने प्राणके मध्य (मनमें) क्या सोचे थे? क्यों मुझे बुलाया? क्यों मुझे आदर—पूर्वक आमंत्रित करके यहां लाये? मैं कौन हूं? यह जो देशव्यापी आंदोलन—जिस आंदोलनमें कि स्वराजके लिए सारा देश सहायता दे रहा है, जिस शांतिमय संग्राम क्षेत्रमें देशके सभी लोग झुके हुए हैं—क्या उसके कार्य्यमें मदद करनेके लिए आपलोगोंने मुझे बुलाया है? या केवल देखनेके लिए? जिस तरह एक अपूर्व्व जानवरके आनेपर लोग उसे देखने जाया करते हैं, उसी तरह देखनेके लिए? पहले यही समझ लीजिये कि मुझे आप लोगोंने क्यों बुलाया है। क्या आपलोग स्वराज्य चाहते हैं? वास्तवमें क्या स्वराज्य चाहते हैं? मैं इसका उत्तर इस सभासे चाहता हूं। आपलोग क्या स्वराज्य चाहते हैं? (चाहते हैं, चाहते हैं,) स्वराज्य चाहते हैं तो फिर इस कालेजमें क्यों लड़कोंको रक्खे हैं? क्यों इस काले-

जकी छतपर श्रीहट्टके कलंकका झण्डा अबतक फहरा रहे हैं ? जो केवल मुंहसे जय ध्वनि करते हैं, जिनमें भीतर स्वराज्यकी वेदना जागृत नहीं है, जिनके हृदय स्वराज्य-रससे भींगे नहीं हैं, वह लोग क्या स्वराज्य पानेकी इच्छा कर सकते हैं ? स्वराज्य पाना क्या खेल तमाशा है ? सभाओंमें जाकर 'महात्मा गांधी-की जय' बोलनेसे क्या हुआ ? इसीसे क्या समझ लिया जाय कि स्वराज्य प्राप्त होगा ? जिस समय मैं देखूंगा कि अदालतें शून्य हो गयी हैं, वकीलोंने अदालतें छोड़ दी हैं, जिस समय देखूंगा कि स्कूल, कालेज बिलकुल खाली हो गये हैं, युवक मंडली कृषकोंकी पराधीनताकी जंजीर तोड़नेके लिए देशहित साधनका ब्रत धारणकर गांव गांवमें फिर रही है, उस समय मैं समझूंगा कि आपलोग स्वराज्य चाहते हैं। यह जय किसकी जय है ? क्या महात्मा गांधीकी ? महात्मा कौन हैं ? वह एक असाधारण व्यक्ति हैं इसमें संदेह नहीं ; पर भारत क्या एक आदमीकी जय चाहता है ? आज भारत चाहता है भारतकी जय। म० गांधीकी जयध्वनिसे जिस समय हमलोग आकाशको प्रतिध्वनित करते हैं, उस समय मनमें यह बात उत्पन्न होती है कि वह जय अभी हुई नहीं किन्तु उस जयकी सम्भावनासे हमारा हृदय पूर्ण हो गया है इसीसे बोलते हैं महात्मा गांधीकी जय। जब आप कार्य क्षेत्रमें उतरेंगे, जब सरकारी स्कूल, कालेज, और अदालतें भांय भांय करने लगेंगी, जब प्राणकी अशांत चेष्टा स्वराज्य प्राप्तिके लिए एकाग्र होगी, तब समझूंगा

कि आपलोग स्वराज्य चाहते हैं; और तभी महात्मा गांधीकी जय पूर्ण होगी।

अपने हृदयमें विचारकर देखिये। असार कल्पनामें मत्त न होइये। स्वराज्य, प्रयत्न और साधनाके बिना गाछके फलकी तरह टपक नहीं पड़ेगा। वह साधना अभी ही आरम्भ करनी होगी। यदि ऐसा नहीं कर सकते, इस साधनाको सिद्ध करनेके लिए यदि आप दृढ़ प्रतिज्ञ नहीं हो सकते, तो मैं कहूंगा कि आपकी यह स्वराज्य चाहना झूंठी है, और यह हृदयकी चाहना नहीं है। विधाताके संसारमें जो जिस बातको चाहता है वह उसको निश्चय पाता है। मैंने अपने जीवनमें इस बातको अच्छी तरह देखा है कि जिसके लिए मैंने हृदयसे चाहना की है वह मुझे निश्चय ही प्राप्त हुई है, प्राण साधना न होनेसे कोई भी मूल्यवान् वस्तु प्राप्त नहीं होती। आप क्या स्वराज्य चाहते हैं? आपलोगोंने क्यों मुझे निमन्त्रण देकर बुलाया है? आपके न बुलानेपर भी तो मैं यहां आता;—क्यों आता? मैं यहां बतलाऊंगा कि क्यों मैं बंगाल देशमें घूम रहा हूं। मेरे हृदयमें एक उद्दाम आवेग है इसलिए बंगालके शहर शहरमें घूमता फिरता हूं। मैंने अपने हृदयमें जो शब्द सुना है वही शब्द मुझे घुमा रहा है। जबतक स्वराज्य नहीं मिलेगा, जबतक स्वराज्यकी स्थापना न हो जायगी, तबतक आपलोगोंको मैं बारबार पुकारूंगा,—और पुकार पुकारकर अस्थिर करूंगा, तबतक आपलोगोंको आराम न करने दूंगा। वर्षों, महीनों, जहां रहूंगा बारबार पुकारता रहूंगा,—स्वराज्य

चाहिये, आइये—हमारी प्राणरक्षाके लिए, देशके लिए स्वराज्य चाहिये। कितने ही लोग इस बातसे भयभीत हो उठते हैं, कितने ही कहते हैं हमें स्वराज्य नहीं चाहिये; पर मैं इसे भूलूंगा नहीं। जबतक मैं स्वराज्य न प्राप्त करूंगा, तबतक उसके आवेगमें मैं प्रत्येकका हृदय उद्विग्न करनेमें थकूंगा नहीं। मैं आज आया हूं कल फिर आऊंगा, और आपलोगोंके हृदयमें वेदना जगाकर तभी छोड़ूंगा।

गत २० वर्षोंसे सामान्य भावसे देशकी बातोंका अनुभव कर रहा हूं। किन्तु आज पंजाबके अत्याचार और खिलाफतके प्रति अविचारपर जीवन त्यागकर स्वराज्यके लिए लगा हूं। मेरे हृदयपर मानों किसीने अलक्ष्य रूपसे यह बात लिख दी है कि स्वराज्यके बिना संसारमें जीना व्यर्थ है। श्रीहट्टमें कौन स्वराज्य चाहता है? मैं जानना चाहता हूं। मैं पुकारता हूं आओ भाई, जननीकी गोदमें आओ, इस भारत स्मशानमें क्या कोई स्वराज्यकी साधना नहीं करेगा? कौन स्वराज्य चाहता है? (मैं' मैं, की आवाज़) तो आओ, माताके नामसे इस गुलाम-खानेको सबलोग छोड़ दो। कहो मातेश्वरी! जबतक तुम्हारे पांवमें दासत्व शृंखला रहेगी तबतक स्कूल, कालेज नहीं चाहिये। जब हमारी माताके पांवमें बेड़ी है तो भला इस शिक्षा दीक्षासे लाभ ही क्या? श्रीहट्टमें कौन स्वराज्य चाहता है? आप मेरी पुकार न सुनेंगे? मैं छोड़ूंगा नहीं, पुकार पुकारकर हैरान करूंगा। फिर पुकारता हूं—मांकी वेदना किसके प्राणपर लगती

है ? ('मेरे' 'मेरे' की आवाज़) कौन है ?-आओ यह मांकी पताका फहरा रही है, इसीके नीचे खड़े होजाओ। बंगालमें क्या मनुष्य नहीं हैं ? कौन, जो अंधकार देखता है ? कौन है, आओ ! खड़े हो जाओ। मांकी जंजीर काटनेके लिए, आओ। बंगालके किसान स्वराज्यका मर्म जानते हैं, स्वराज्य चाहते हैं। बंगालमें घूमनेसे इसका मुझे अनुभव हुआ है। और हमारे सभ्यताके नेता, शिक्षित समुदाय—हमें क्या स्वराज्य चाहिये ? देशके कृषक हमारे चिरकालतक पूज्य रहेंगे। कितना कष्ट करके वह खेतमें कर्षण (खेती) करते हैं, और हम उनके साथ कितना अत्याचार असम्मान करते हैं। सोचनेकी बात है, आखिर वह भी तो मनुष्य ही हैं न !

हम शिक्षित लोग, क्या मनुष्य हैं ? कब हम हृदयपर हाथ रखकर कह सकेंगे कि हम मनुष्य हैं ? जिस शिक्षा दीक्षाने हमको अमानुष बना दिया है उसको ध्वंस करके ही हमलोग पुनः मनुष्य बन सकेंगे। प्रिंसपल (Princepal) अपूर्व बाबू कहते हैं कि Destruction (नाश) के पहिले Cunstruction (निर्माण)की दरकार है। क्या मैं Destroy (नाश) करने आया हूं ? मैं किसको ध्वंस करनेके लिए आया हूं ? उसको, जिसने हमको अमानुष बना दिया है; जो हमको 'वंदेमातरम्' मंत्र समझने नहीं देता। शिक्षालय कहां है ? कौन शिक्षक अपने हृदयसे कह सकता है कि मैं जो शिक्षा देता हूं वह प्रकृत शिक्षा है ? यह शिक्षालय दास्यालय है—यह गुलामखाना है। इस शृङ्खलासे

मुक्त करने आया हूं यही क्या मेरा अपराध है? इसीलिए क्या श्रीहट्टके विद्यार्थी मेरी बात न सुनेंगे? "मनुष्य! मनुष्य! उसे खोज देखो न कितने मनुष्य हैं?"—मनुष्य होना बड़ा ही कठिन है; मैं तुम्हारे कालेजके जो प्रिंसपल अपूर्व बाबू हैं उन्हींकी बात कहता हूं, उन्होंने कहा है कि मैं यहां शिक्षा ध्वंस करनेके लिए आया हूं, शिक्षा प्रणालीकी Continuity (धाराप्रवाह) चाहिये। मैं पहिले ही बतला चुका हूं कि अंग्रेजी शिक्षा प्राप्तकर हम-लोगोंकी एक भूल धारणा हो गयी है। हमलोग समझते हैं मनुष्यका मन कबूतर खानेके समान है—धर्म, शिक्षा, राजनीति आदि अनेक खानोंमें वह विभक्त है। यह भूल है। जिस दिन देखूंगा कि बंगाली यह समझ गये हैं कि यह समुदय विभाग वस्तुतः विभिन्न नहीं है, उस दिन समझूंगा कि बंगाली चैतन्य हैं उस समय हम देखेंगे कि सब मिलकर चारों ओर अपनी शक्ति-का प्रकाश कर रहे हैं। अनेक विषय, अनेक दरबे-यह विलायती भूल है। मैं जो राजनीति और स्वराज्यकी बातें लेकर जगह जगह घूम रहा हूं, वह धर्म और भगवानकी बाणी है। जो कार्य भगवानकी लीलाके अनुकूल नहीं उसमें कभी भी सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। अपूर्व बाबू हमारे भाई हैं। विलायतमें बहुत दिनोंतक हम दोनों एक साथ थे। उनसे मैं कहता हूं कि देशमय प्राणमें जो धारा प्रवाहित हो रही है उसको न्याय शास्त्रका किला बनाकर बांधनेकी चेष्टा विधाताके विधानमें नष्ट हो जायगी, ज़रा भी टिक नहीं सकती। 'नाशके पहले निर्माण'

यह युक्ति है कि उत्तर है? निर्माण कौन करेगा? श्रीहट्ट निवासी या विलायतके अंग्रेज? इस गुलामखानेका खर्च कौन देता है? इस गुलामखानेके चलाने तथा गुलाम तैयार करनेके व्ययके बीस भागमें एक भाग सरकार देती है, बाकी उन्नीस भाग स्कूल कालेजके भारतवासी लड़कोंकी फीससे आता है। यदि आपलोग खर्च दे सकते हैं तो क्या कालेज तैयार नहीं कर सकते? फिर इसके क्या माने कि निर्माण हो फिर नाश। इसके माने यह है कि हमलोग बहुत सुखी हैं; जबतक हमारा स्कूल कालेज न हो जायगा तबतक भी हमलोग सानन्द हैं। क्या आप सानन्द हैं? (नहीं, नहीं) यदि नहीं तो सरकारी स्कूल कालेज क्यों नहीं छोड़ते? क्या जब आकाशसे स्कूल और कालेज टपक पड़ेंगे तब अपूर्व बाबू कहेंगे कि अब गवर्नमेण्टके स्कूल कालेज टूट जायं?

मैं निर्माण और नाश कुछ भी नहीं समझता; मैं तो गुलाम-खानोंसे बच्चोंकी मुक्ति चाहता हूं। ये गुलामखाने टूट जांय, ध्वंस हो जायं। लड़कोंको गुलामखानेमें रखकर गुलाम न होने दो, इसमें पाप है। असत्यको आश्रय देनेवाला भी अपराधी होता है। हमारी सुजला-सुफला मातृ-भूमि आज श्मशानवत् हो रही है। क्या आप देखते नहीं हैं यह जाति अब जाति नहीं रही? मांके चरणोंमें क्या चिरकालतक शृंखला ही रहेगी? यदि हां, तो मैं कहूंगा कि बंगाली जाति ध्वंस हो जाय! ध्वंस होना अच्छा है! जो जाति स्वाधीनता नहीं जानती, जो अपनी निजकी भावना

नहीं रखती, उसका ध्वंस होना ही सुन्दर है। मिथ्या तर्क-शास्त्र-की आवर्जनाको दूर करके जब आपलोग कहेंगे कि हम स्वाधीन हैं तो एक मुहूर्त्तमें आप स्वाधीन हो जायँगे; एकवार मनमें कहिये, 'हम स्वाधीन हैं।' यदि आपके मनमें अपना कुछ रहा ही नहीं, यदि आप विदेशीके निकट अपना मन और प्राण गँवा देंगे, तो अल्लाह (ईश्वर)के चरणोंपर आप क्या रक्खेंगे? तुम्हारा मन और प्राण तो तुम्हारा रहा ही नहीं। जस्टिस उडरफने कहा है This is the cultural conquest of the west आज अंग्रेजोंने बाहरकी चीजों को ही नहीं किन्तु हमारे मनको भी जीत लिया है। अतः दासकी अपेक्षा भी हम हीनदास हैं, और इन गुलामखानोंमें हीनदास तैयार होते हैं। जो अपने हृदयमें स्वाधीन नहीं है, जो अपने मनपर अपना अधिकार नहीं रख सकता, उसको विधाता क्या देगा? स्वराज्यकी बात भली भांति समझिये, मनमें तौलिये, मिथ्या युक्तिको आश्रय मत दीजिये। विधाताकी वाणी सुननेकी चेष्टा करिये। जो विधाताकी वाणी सुनना चाहता है, वह अब सुननेहीवाला है। यदि कालेजमें जाकर कानमें रुई डालकर बैठना चाहते हैं, तो रहें। गुलामकी जातिने गुलामी सीखी है; वह गुलाम ही रहेगी। और यदि यह नहीं चाहते, तो स्वराज्यकी वाणी सुनिये। आपलोग क्षुद्र स्वार्थोंका बलि दान करें। जो डिप्टी मैजिस्ट्रेट होना चाहता है, वह जननी जन्म भूमिकेलिए उस इच्छाकी बलि दे; जो सरकारी कर्मचारी होना चाहताहै वह उस इच्छाकी बलि दे। उस अर्थलोभ, उस मिथ्या सम्मानके लोभको भगवानके चरणोंपर स्वराज्यके नामपर बलि दीजिये।

तब कहिये कि स्वराज्य चाहिये, हम स्वाधीन हैं। प्रत्येक मनुष्य स्वाधीन है। मनसे, प्राणसे, सवेरे, संध्या कहिये कि हम स्वाधीन हैं। हम किसी जातिकी स्वाधीनता हरण नहीं करना चाहते; पर यह जरूर चाहते हैं कि अन्य कोई जाति हमारे ईश्वर-प्रदत्त उन्नति-पथमें वाधा न डाले। इसीलिए कहते हैं कि हम स्वाधीन हैं। जो लोग कहते हैं कि हम स्वाधीन हैं, वह स्वार्थको छोड़ें। मांके नामपर जयध्वनि करें। बोलिये 'मांकी जय।' हमारे देशके जो नेता कोर्टमें जाते हैं क्या वह स्वार्थकी बलि देंगे? क्या उनके कानतक मांकी पुकार नहीं पहुंचती? इन थोड़ेसे महीनोंमें क्या खाने पहि-ननेका कष्ट बहुत अधिक होगा? जो जायगा उसका सौगुना मिलेगा। इस अत्याचार-निपीड़ित भारतवर्षमें इस जीवन निष्पे-षणकारी नौकरशाहीके कुसंगको दूर करिये। सेना लाकर आपपर प्रहार करना तुम्हारे (सरकारके) स्वत्वकी बात है। हम हाथ खींच लेंगे; चाहे तुम कुछ भी क्यों न करो, तुम्हारी सहायता न करेंगे; तुम्हारा कोई काम न करेंगे—यह हमारा अधिकार है। मैं क्या वकालत न करूंगा, यह क्या बहुत कठिन काम है? आज-तक तो आप सबके नेता बनकर हाथ पकड़कर खींच रहे थे। अब देश क्या कहेगा? सभ्य जगत् जिसमें कि इतने दिनोंतक आंदोलन कर रहे थे, अब क्या कहेगा कि जब स्वार्थकी बलि देनी आवश्यक हुई तो कोई नहीं मिलता? सोचनेसे लज्जा आती है, आंखोंमें आंसू आते हैं, कि क्या इस श्रीहट्ट नगरमें ऐसा कोई वकील नहीं है जो क्षुद्र स्वार्थकी बलि देनेको तैयार हो? यदि आप

ऐसा नहीं कर सकते तो हट जाइये;—मैं देशके कृषकों और मजदूरोंको हृदयसे लगाकर स्वराज्यके मार्गपर चलूंगा। मुझे वक्तृता नहीं चाहिये, कार्य्य चाहिये! भाई, क्या कोई यह न दे सकेगा? देश पुकार रहा है। तुम्हारी शृङ्खलाबद्ध माता पुकार रही है। भारतवर्ष चिरकालसे त्याग-मंत्रसे दीक्षित है, और आपलोग इतना त्याग नहीं कर सकते हैं? यह स्वार्थ क्या इतना बड़ा है? क्या विधाताकी वाणी विफल होगी? क्या आपका क्षुद्र स्वार्थ स्वराज्यसे भी बढ़कर है? यदि कलेजा चीरकर दिखला सकता तो दिखलाता कि मेरे हृदयको कितना आघात पहुंच रहा है।

प्रिय बांधवगण, आइये! उन्मुक्त आकाशके नीचे आइये! उन कृषकोंके साथ आइये, जिनसे हम आजतक घृणा करते थे। त्याग-मंत्रके द्वारा देश एक होकर संसारको दिखला दे कि भारतमें त्यागकी जय होती है, भोगकी जय कदापि नहीं। दल बांधकर लड़के निकलें, देशमें भ्रमण करें, गांवोंमें कांग्रेस-समितियाँ खुलें। चरखोंके काममें लगिये; चरखेके पुनरुत्थानसे स्वराज्यकी स्थापना होगी। आपलोग प्रत्येक काममें विधाताका अटूट विश्वास रक्खें। मैं भीख मांगने आया हूं, भिक्षा दीजिये। मैं केवल अर्थकी भिक्षा नहीं वरं प्राणकी भिक्षा चाहता हूं। प्राण लेने आया हूं, प्राण चाहिये। प्राणके स्रोतमें, देशके दीप्तिमान होनेकी भिक्षा चाहता हूं। भाई कौन मुझे अपने क्षुद्र स्वार्थकी बलि देगा? आइये! स्वराज्यकी जयध्वनि करें; स्वराज्यकी विजय पताका भारतमें फहरायें।

स्वराज्य साधन।

(यह लेख देशबन्धुदासने ता० ३० सितम्बर १६२१ के "बांगलार कथा" नामक अपने साप्ताहिक पत्रमें लिखा था।)

स्वराज्य माने क्या? अथवा असहयोगका ही अर्थ क्या? स्वराज्यके माने और कुछ नहीं—स्वराज्यका इस प्रकार अर्थ नहीं हो सकता कि पार्लमेंटसे एक ऐक्ट तैयार करके हमें उपहार देंगे। स्वराज्य वह वस्तु नहीं। क्यों नहीं? स्वराज्य माने हैं क्या? स्वराज्यके माने हैं तुम्हारे अंतरालमें जो प्रकृति है उस प्रकृतिको उपलब्ध (प्राप्त) करना। सबकी उन्नति एक रकम नहीं होती; समस्त जातियोंकी उन्नति एक ढंगसे नहीं होती। जिस तरह प्रत्येक मनुष्यकी एक स्वतंत्र प्रकृति है, और उस महा प्रकृतिके अधीन होने पर भी प्रत्येक मनुष्यकी एक स्वतंत्र प्रकृति है, उसी तरह प्रत्येक जातिकी एक स्वतंत्र प्रकृति है, उस प्रकृतिका अनुसरण करके उस जातिके भीतर अनुसंधान (खोज) करना होगा; वह प्रकृति हमने खो दी है,—नहीं—वह प्रकृति ढँक गयी है, कारण प्रकृतिको कोई खो नहीं सकता। हमारी बहुत दिनोंकी पराधीनताके दबाव तथा विलास-प्रियतासे, हमारा जो स्वरूप हमलोगोंके घट घटमें छिपा हुआ है, उसकी साधना, उसकी खोज ही 'स्वराज्य' है। उस वस्तुको कोई भी दे नहीं सकता। अंग्रेज एक शासन-प्रणाली

दे सकते हैं, अंग्रेज कह सकते हैं कि गड़बड़का काम ही क्या है, तुम स्वायत्त शासन लो। पर वह स्वराज्य नहीं है। वह तुम्हारा उपार्ज्जन नहीं, साधनाका फल नहीं। कोई स्वराज्य क्या दे सकता है? आपको वह अर्ज्जन करना होगा, आपको अपनी साधनासे जो यथार्थतः सत्य प्रकृति है, उस सत्य प्रकृतिको ढूंढ़ कर उसे बाहर उपस्थितकर संसारके समक्ष खड़ा होना होगा, यही स्वराज्यका अर्थ है। मैंने उस दिन एक पत्रमें लिखा था कि स्वराज्य साधना हमारे अधिकारमें है। स्वर्गीय लोकमान्य तिलक महाराजने कहा है—"स्वराज्य हमारा जन्म--सिद्ध अधिकार है।" हमारा अधिकार क्यों है? इसलिए कि अपनी प्रकृतिपर हमारा अधिकार है।

जैसे मेरा कोई ऐश्वर्य हो तो मैं कहूंगा कि इस ऐश्वर्यपर मेरा अधिकार है। स्वराज्य हमारे अंतरमें स्वराज्य हमारी प्रकृति, हमारी सत्य प्रकृति—इसीलिए स्वराज्यपर हमारा जन्म--अधिकार है। विधाताने वह अधिकार हमें दिया है। हमारी जो प्रकृति है, वह विधाताका दान है, विधाताकी लीला है। दानकी अपेक्षा विधाताकी लीला बड़ी है। समस्त जगतका इतिहास विधाताकी जो अन्तरङ्ग लीला है उसीका वाहरी प्रकाश है। वही समस्त इतिहास है, वही भारतका इतिहास है। लीलामयका गुण क्या, लीलामयका क्या स्वरूप? वह वैंशिष्ट्य चाहता है। हमारे वैष्णव शास्त्रमें कहा है, वह निजको बहु करता है और स्वयं उस बहुत्वका उपभोग करता है। महाप्रभु यही बात कह गये हैं। अपनेको

बहु करके उस बहुत्वका आस्वादन करता है; उस आस्वादन करनेका फल है, वह फल अन्तरङ्ग लीला नहीं, वह फल जगतका इतिहास है। वह युग युगमें अपनेको 'बहु' करता है, और भिन्न भिन्न जातिकी बिशिष्ठताकी स्वयं रक्षा करता है। इसीलिए स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। इसमें कर्त्तव्य क्या है, यह बात हिन्दू मुसलमानोंको समझानी नहीं होगी। मैं अङ्गरेजोंकी राजनीतिको नहीं मानता, क्योंकि मेरी यह धारणा है कि उसके भीतर कोई सच्ची बात रह नहीं सकती मैंने खूब पढ़ा है, इस समय जान पड़ता है उसकी अधिकांश बातें भूल हैं। इस स्वराज्यमें हम अपना अधिकार क्यों कहते हैं। मनुष्यका धर्म कहनेसे क्या समझा जाये? युगशङ्ख बज उठा है और युग-धर्म्म आनेसे उसका पालन करना होता है। अब हमारा कर्त्तव्य क्या है? भगवानकी लीलासे भारतमें नवीन जाति-उत्थान हो उठा है। उसकी लीलामें योग देना हमारा अधिकार है। कारण प्रत्येक मनुष्यका कर्त्तव्य प्रत्येक जातिका कर्त्तव्य भगवानकी लीलाका सहचर होता है। हमें सहचर होना पड़ेगा, दूसरा उपाय नहीं है। क्या आज, क्या, कल, क्या दो दिनके बाद सहज पथसे वा टेढ़े मार्गसे भगवान्‌की लीलाका सहचर होना ही पड़ेगा। यही कहना है कि सीधे रास्ते किंवा टेढे रास्ते इस लीलाके मध्यमें आह्वान हो रहा है; क्योंकर, वही जाने; किस पथसे, सो भी वही जाने। यह युगध्वनि ही पथकी सहचर है।

स्वराज्य—साधन हमारा कर्त्तव्य है, इसका कारण भग-

वानकी लीलामें उसका सहचर हमें बनना ही पड़ेगा। वास्तविक ज्ञानसे या अज्ञानसे कह नहीं सकता; कोई इस बातको जानता है, कोई नहीं जानता। जो अच्छी तरह जानते हैं वे बहुत ऊपर उठ गये हैं किन्तु ज्ञानसे कि अज्ञानसे, हम भगवानकी लीलाके सहचर हैं। इसीलिए स्वराज्य हमारा कर्त्तव्य है। स्वराज्य आपको चाहना होगा; आप अपनी प्रकृतिकी खोज नहीं करेंगे, तो क्या आपके प्रकृतिकी साधना अङ्गरेज करेंगे? कैसी लज्जाकी बात है! ऐसी शिक्षा मिली है कि हमारे देशकी जो चरम साधना है, महाप्रभु जो धर्मरक्षा कर गये हैं, आज उस को बातें शिक्षित लोगोंको कहनेसे वे समझ नहीं सकते। आप क्यों स्वराज्य चाहते हैं, मैं क्यों स्वराज्य चाहता हूं, यह बात किस प्रकार समझाऊं? दासताकी कैसी ज्वाला हैं, किस प्रकार समझाऊं? जो भूखा हो वह किस प्रकार समझा सकता है कि वह क्यों अन्न चाहता है—आहार चाहता है? क्या वह युक्तिके द्वारा समझा सकता है क्या वह तर्क करके प्रमाणित कर सकता है कि क्यों स्वराज्य चाहिये। मेरे हृदयमें ज्वाला धधक रही है। मैं कहता हूं स्वराज्य चाहिये। दासत्वकी ज्वालासे जलकर मर रहा हूं इसीलिए स्वराज्य चाहता हूं। मैं इस दासत्वको दूर करना चाहता हूं। अपनी प्रकृतिका अनुसन्धान करनेपर जिस मिथ्याको हम आश्रय देते आ रहे हैं, उस मिथ्याको दूर नहीं भगा सकनेसे प्रकृतिकी साधना नहीं होती। इसके लिए स्वराज्य चाहिये।

आज हमारा क्या आश्रय है? हमारे जीवनका प्रत्येक कक्ष, हमारा धर्माचरण, हमारी शिक्षा दीक्षा, हमारा वाद—विसम्वाद मिटानेका भार हमारी धर्म-कथा, हमारा कर्त्तव्य, सभी कुछ दूसरेके हाथमें सौंपकर हम बैठ गये हैं। जो दूसरा है, जिसके साथ हमारी प्रकृतिका कोई साम्य नहीं, उस दूसरेको दोनों हाथसे आलिंगन करके हम समझते आ रहे हैं कि बड़ा आश्रय पा लिया है। अरे मूर्ख वह क्या आश्रय है? वह आश्रय मिथ्या है, वह प्रलोभन है, वह मोह है, वह दुःस्वप्न है। सत्य आश्रय यह हुआ कि अपनी प्रकृति अपनी क्षमतापर निर्भर है और वह तुम्हारे घटमें है। जो तुम्हारा कर्त्तव्य है उसको बाहर प्रकाश करो। तुम उसे भूलते क्यों हो? एकबार भूलकर मिथ्या आश्रयपर खड़े हो गये हो। यह बात देशको आज सिखानी होगी, शिक्षित समाजको समझानी होगी! हम अपने जातीय जीवनकी सभी कक्षाएं शिक्षा दीक्षातक दूसरेके हाथमें देकर बैठ गये हैं, अब दूसरेके हाथसे शान्तिपूर्ण उपायद्वारा अपनी वस्तु ले लेनी होगी, यही हमारे स्वराज्यकी स्थापना है। आपने इतने समय तक जो शिक्षा दीक्षा मायाके वशीभूत हो विदेशीके हाथमें दे रखी है, जो धर्मका उपाय है उसे अर्थका उपाय कर दिया है, अपनेको धोखा दिया है, प्रतारित किया है, भगवानका अपमान किया है,—उस मोहसे अपना उद्धार कर उसे साधानसे ले आइये, खींचकर ले आइये।

स्वराज्यके मार्गमें

(बांगलार कथासे अनुवादित)

हमारा और हमारी जातिका हृदय पापोंसे मलिन तथा आच्छादित होनेके कारण स्वराज्य प्रतिफलित नहीं हो रहा है। स्वराज्य पानेपर प्रायश्चित करना होगा। किसके कारण मलिनता हुई, क्यों हमारा जातीय जीवन इस प्रकार नष्ट और अपवित्र हुआ, उसे खोजकर निकाल बाहर करना होगा, और साथ ही उन दुष्कर्मोंको भी दूरकर देना होगा।

इस शासन प्रणालीको—जिसके कारण संसारमें हमारा मस्तक नीचा हो रहा है—कौन चला रहा है? यह नौकरशाही कौन है? इस कलको चलानेवाले कौन हैं? चलानेवाले हैं भारतीय हिन्दू और मुसलमान। उस कलको बिना विघ्न-बाधाओंके चलानेके कारण ही हमपर इतना दुःख—इतनी मलिनताकी सृष्टि हुई है। इसीसे कांग्रेसकी आज्ञा है कि—हिन्दू मुसलमानोंकी एकता करके पापका प्रायश्चित करना चाहिये। आत्म-शुद्धिके द्वारा स्वराज्य स्थापन करिये। यह शासनचक्र ही हमारे लिए मारण यंत्र है। इस पेषणके कलको अब और मत चलाइये। हाथ खींच लीजिये—बस यही भारतवासियोंका प्रायश्चित्त है। यह प्रायश्चित्त जिस दिन आप करेंगे उस दिन आपका हृदय, आपकी जातिका हृदय, पवित्र हो जायगा और उसी दिन स्वराज्य भी होगा। क्या आप

जानते हैं कि यह अंग्रेज़ोंका नौकरशाही शासन किस प्रकार चल रहा है ? स्कूलके छात्र, स्कूलके मास्टर, अदालतके वकील, मुक्तार, जज, डिप्टी, मैजिस्ट्रेट, पुलिस, सेना, इन सभोंका संचालन भारतके हिन्दू मुसलमान ही कर रहे हैं, हिन्दू मुसलमान ही इस शासन चक्रको चला रहे हैं। हमारे ही भाई आत्मघात कर रहे हैं, पर उसे वे जानते नहीं हैं। महात्मा गांधी आर्त्तनाद कर रहे हैं; क्यों कर रहें हैं ? इसलिए कि भारतीय महाजाति आत्मघात करनेवाली हो गयी है। आत्मघाती, अरे आत्मघाती हिन्दू मुसलमान भाइयो ! आप अपना हृदय पवित्र करें, अपने हाथोंको अब और कलुषित न करें, भगवानका नाम स्मरण करिये ! जिस चक्रसे आपकी सारी स्वाधीनता, सारा सुख नष्ट हो गया है अब उस चक्रसे आप अपना हाथ खींच लें। यदि आप ऐसा करेंगे, तो निश्चय स्वराज्य होगा।

जिनके मनकी यह धारणा है कि स्वराज्य एक प्रकारकी शासन-प्रणाली है, वे इस तत्त्वको नहीं जानते। वे यह नहीं जानते कि स्वराज्य होनेपर शासन प्रणालीकी स्थापना होती है। पहले स्वराज्य, पीछे शासन प्रणाली। इससे साबित होता है कि अभीतक स्वराज्य आया नहीं।

स्वराज्यका अर्थ क्या है ? स्वराज्यका अर्थ है हिन्दू मुसलमान मिलनसे जो एक नवीन जातिकी सृष्टि हुई है उसकी शुद्ध मनकी सम्मिलित इच्छामें प्रतिष्ठित जीवन प्रणाली। उस इच्छा प्रकाशका उपाय क्या है ? वासनाको प्रगाढ़, इच्छा शक्तिको संयत

और आकांक्षाको दृढ़ करना। जिस दिन भारतके स्त्री पुरुष एक स्वरसे कहेंगे—'स्वराज्य चाहिये,'—उसी क्षण स्वराज्य हो जायगा। उस समय सबको आपका स्वराज्य स्वीकार करना पड़ेगा। किन्तु गुलामीकी जंजीरमें जिसका हृदय बंधा हुआ है उसकी समझमें यह नहीं आता। वह तो यही समझता है कि स्वराज्य एक शासन-प्रणाली है। भगवानसे करुणा प्रार्थना करिये, हृदय पवित्र करिये, तब आप समझेंगे कि स्वराज्य क्या वस्तु है।

यह स्वराज्य किस प्रकार पाया जायगा? बहुतसे विज्ञ पुरुष तर्क करते हैं, बहुतसे लोग इसे हास्यास्पद भी कहते हैं। जिस समय महात्मा गांधीने पहले पहल कहा था कि तीन महीनेके भीतर एक करोड़ रुपया, एक करोड़ कांग्रेसके सदस्य और बीस लाख चरखा चाहिये उस समय बहुतसे लोगोंका इस बातपर मजाक उड़ाना सुना गया था। बहुतोंने कहा था देशके कामके लिए एक करोड़ रुपया माँगना महात्मा गांधीका पागलपन है। इतनी बड़ी रकम क्या इतने अल्प समयमें इकट्ठा हो सकती है? पागलोंके सिवा इस प्रकारकी बातें भला और दूसरा कौन कर सकता है! ईश्वरकी कृपासे वह सब तर्क शेष हुआ एक कोटिसे ऊपर रुपये एक करोड़ सदस्य और बीस लाखके बदले चालीस लाख चरखे तीन मासमें ही हो गये।

बहुतसे लोग कहते हैं एक करोड़ रुपया एक करोड़ सदस्य और बीस लाख चरखा होनेसे स्वराज्य होगा पर स्वराज्य अभी-

तक कहां हुआ ? इस प्रकारके बहुतसे तर्क बहुतोंके हृदयमें उत्पन्न होते रहते हैं। तर्कोंके उत्तर दिये जा सकते हैं, पर जो जागता हुआ भी सोया हुआ बना है वह भला कैसे जगाया जा सकता है ? एक करोड़ रुपया और सदस्य तथा बीस लाख चरखा होनेसे ही क्या स्वराज्य हो जायगा ? कोई नहीं कह सकता कि स्वराज्य होगा; इससे तो स्वराज्यकी सीढ़ी तैयार होगी। फिर क्रमशः हमलोगोंको एक एक सीढी चढ़ना होगा। पहली सीढ़ी चढ़ते ही यदि कोई कहे कि क्यों दोतल्लेपर तो पहुंचे ही नहीं, तो वह दोष किसका होगा ? दोष आपका होगा न कि दोतल्लेका। हमें सब सीढ़ियोंको चढ़कर तय करना होगा तब स्वराज्य मिलेगा। स्वराज्य पाना क्या लड़कोंका खेल है ?

विदेशी वहिष्कार और स्वदेशी ग्रहणके सम्बन्धमें पंडित लोग अनेक प्रकारका तर्क करते हैं कि कलके सामने क्या हम हाथसे कपड़ा तैयार करके बराबरी कर सकते हैं ? विलायती संगति और राजनीतिक इकानमीसे हमारा माथा ऐसा भर गया है कि सीधी सादी बात भी बिना तर्कके माथेमें नहीं घुसती। विलायतमें बड़ी बड़ी मिलें, हजारों कारखाने, मैंचेष्टरसे जहाजका जहाज कपड़ा आता है—तुम क्या चरखा चलाकर उसकी समानता कर सकोगे ? मैं तो कहता नहीं कि मैं समानता कर सकूंगा और न मैं समानता करना ही चाहता हूं। उनकी बड़ी बड़ी मिलोंके सामने हम कुछ नहीं हैं। उनके सामने हमारा पराजय निश्चय है। उनकी सैकड़ों वर्षोंकी साधना हम एक दिनमें

कैसे कर सकते हैं। यह भारतवर्षका मार्ग नहीं, उसका मार्ग इससे भिन्न है।

पहले हमारे देशके घर घरमें चरखा चलता था, जिस समय अन्यान्य कार्य्योंसे अवकाश होता उस समय स्त्रियां चरखा चलातीं। उसी चरखेके सूतसे कुटुम्ब भरके लिए कपड़ा तैयार हो जाता था। वही बात आज समयके फैरसे हमें स्वप्नवत् प्रतीत हो रही हैं। गुलामी भोग करनेके कारण जिस सुन्दर प्रथाको आज भारत भूल गया है—उस प्रथाकी चर्चा करनेसे लोग गालियां सुनाते हैं और पागल बनाते हैं। पर वास्तवमें पागल कौन है? आप हैं। आप अब भी विदेशियोंकी ठोकरें खा रहे हैं इसलिए आप पागल हैं न कि हम। आज कौन करोड़ों भारतीयोंको भूखों मार रहा है? जिस प्रकार किसान अपने घरमें अन्न तैयार करके भोजन तैयार कर लेता है उसी प्रकार समय था जब कि हम वस्त्र भी अपने घरमें तैयार कर लेते थें। फिर आज कैसे आप कहते हैं कि यूरोपमें, मैंचेष्टरमें बड़ी बड़ी मिलें है हम क्या कर सकते हैं? प्यारे भाइयो! केवल तर्कसे कुछ न होगा। विश्वास चाहिये, कार्य्यकी क्षमता चाहिये; शक्ति चाहिये। इसमें प्रतियोगिताकी कोई बात नहीं है हमें प्रतियोगिता चाहिये भी नहीं; चाहिये विदेशियोंके हाथसे मुक्ति, चाहिये पवित्रता, मनुष्यत्वहीनताका नाश करके अपना उद्धार।

आपको स्वराज्यकी उपलब्धि करनी होगी, जो आपका धर्म है उसे आपको ग्राह्य करना ही होगा। आप कबतक ऐंठकर चलेंगे, युग-धर्मको क्या कोई हटा सकता है ? मिथ्या तर्कजालमें अब और कबतक आप अपनेको बांधे रहेंगे ? भगवानकी वाणी किसी न किसी दिन अवश्य ही हृदयमें जागेगी। आज महात्मा गांधी तुम्हें शांतिके मार्गमें पुकार रहे हैं। महात्माकी बाणी सुनिये, शांति मार्गपर चलिये, स्वराज्य–उद्धार करिये। जो स्वराज्य नहीं चाहते, उनके जीवनसे लाभ और फल क्या है ? आपका जो नायक है वह तभीतक नायक है जबतक कि वह नायकका काम करेगा। आज जो विधाताकी वाणीको न मानेगा वह नायक नहीं, आज जनसाधारण नायक होगा। देशके ब्राह्मण आदि सब यदि ध्वंस हो जायं, मर जायं, तो कोई चिन्ता नहीं; मैं तो चाहता हूं कि किसी प्रकार भी हो, देश जागे, नूतन शक्ति लाभ करे। देशका कोई व्यक्ति यदि न रहे तो न सही, किन्तु भारत अवश्य रहेगा। जो साधना भारतवर्षके इतिहासके पन्ने पन्नेमें निहित है, जिसका इशारा आज हमें सुनाई पड़ रहा है, वह साधना जागेगी–अवश्य जागेगी। यह विधाताकी लीला है। यदि आप उस लीलाका सहचर होना नहीं चाहते तो आपका नाश हो जायगा,—आप कभी रह नहीं सकते, मर जाएंगे। इसीसे कहता हूं भाई आज शांति पथपर आइये, आज यदि नहीं आइयेगा तो कल आपको निश्चय ही आना होगा। मृत्यु आपके द्वारपर दंडायमान है, यह सुनिये भगवानके रथ-चक्रकी घर्घरध्वनि, इच्छा हो तो देखिये ! चारों

ओर इस जातिके जातित्वकी धारा बहती जा रही है, यह जाति अवश्यमेव जागेगी। देखिये चारोंओर रुद्र शक्तिकी प्रचंड लीला ! यह जाति उठेगी अवश्य उठेगी। इधर जनता उठ रही है, ऐ मेरे डरपोक भाइयो ! स्वार्थान्ध हो इस समय आप क्या कर सकेंगे ? भय और स्वार्थको ठोकरोंसे दूर कर दीजिये !

शिक्षा।

••०•०••

बंगाल प्रांतीय सभा सन् १९१८ में भाषण।

इस राक्षसी शिक्षाके कारण हम लोगोंका यह घृणित स्वभाव पड़ गया कि जिन लोगोंने अंग्रेज़ीकी शिक्षा नहीं पायी है उनको हम घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं; उनको वेवकूफ अशिक्षत निरक्षर कहते हैं और उनकी अज्ञतापर हँसते हैं। परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि हमारे यह अपठित देश-वासी सहृदय हैं; अतिथियोंका सत्कार करते हैं; अपने कष्टापन्न पड़ोसियोंके साथ समवेदना करते हैं; हमको शाब्दिक शिक्षासे जितना लाभ नहीं हुआ है, उतना लाभ उनको अनुभवजन्य शिक्षासे हुआ है। मुझे तो यह प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि यदि हम अपनी नवोत्थित राष्ट्रीय आत्माको सज्ञानमण्डित करना चाहते हैं तो अंग्रेज़ीके स्थानमें मातृभाषाको माध्यम बनाना होगा। जो शिक्षा हमको आजकल मिलती है वह कृत्रिम और गुलामीकी वस्तु है; वह हमारी राष्ट्रीय आत्माके अनुकूल नहीं है, इसलिए उससे हमारी अन्तरात्माको पुष्टि नहीं मिलती।

हमारी युनिवर्सिटियों (विश्वविद्यालयों) से उसी भांति बी० ए० और एम० ए० निकलते हैं जिस भांति अंग्रेज़ी कारख़ानोंसे बटन और पिनें निकलती हैं। पर हम मनुष्य भी

बनाते हैं (?) हम जनताके प्रसुप्त आत्मज्ञान और आत्म-सम्मानको भी जगाते हैं ? यह उच्च शिक्षा लोगोंको अन्धा और अभिमानी, अन्तरात्महित विमुख, अज्ञानका उपासक, बना देती है। भाईसे, पितासे तथा अन्य लोगोंसे नाता छुड़ानेसे भी यह पापिनी बाज नहीं आती। यहांतक कि देहाती पिताको पिता कहकर परिचय देनेमें हृदय संकुचित होता है। क्या इस शिक्षाके लिए यह साधारण लज्जाकी बात है ? इसीसे फिर मैं पूछता हूं, एक झूठे आदर्शके पीछे धन और शक्तिका इतना अपव्यय क्यों किया जा रहा है ?

स्वायत्त शासन ।

(कलकत्ता कांग्रेस १९१७)

मुझे इसकी परवाह नहीं है कि स्विटज़रलैण्ड, इंग्लैण्ड, या आस्ट्रेलियाकी शासन-पद्धति कैसी है । हम अपनी पद्धति आपही ठीक करेंगे । मैं किसी देशका अनुकरण नहीं करना चाहता । मैं चाहता हूं कि हमारी पद्धति हमारे देशके अनुकूल हो और भारतीय महापद्धति कही जा सके। चाहे इसमें हमें दूसरोंका अनुकरण करना पड़े अथवा नहीं; हमको यही चाहिये । तबतक व्यर्थ वादानुवाद मत करो । अपनी सारी शक्ति एकत्रित करो और गांवमें, नगर नगरमें, प्रान्तीय सभाओंमें और इस कांग्रेसमें एक स्वरसे कहो कि जबतक शासनका सारा अधिकार हमारे हाथोंमें न आजायगा तबतक हम न सन्तुष्ट होंगे और न किसीको संतुष्ट रहने देंगे, पर लूटमार हिंसा आदि कामोंसे किसीको असंतुष्ट न करेंगे । स्वायत्त शासन हमारा नैसर्गिक स्वत्त्व है; यह प्रत्येक व्यक्तिका स्वत्त्व है कि वह जोवित रह सके और वृद्धि पा सके। यह स्वत्व हमसे बहाना करके और धोखा देकर अन्यायसे छीन लिया है गया परन्तु अब हम चैतन्य हैं । अब हम धोखेबाजोंको पहिचान गये हैं । अब हम उनकी दाल न गलने देंगे । अभीतक हम सोते थे पर अब ईश्वरकी कृपासे जाग गये हैं और अपना स्वत्व चाहते हैं ।

* इति *